

अपनी ओर से

शुभलाबाई मय-माता का तीसरा पुण्य पाठको तक पहुँचाते हुए हमें दर्प दी रहा है ।

यह उपन्यास ३३ वर्ष पूर्व—वि० सं० १९७३ फाल्गुन में—
बहली बा प्रकाशित हुआ था और पं० नाथूरामजी प्रेमीने जैन-
हिंदी के माध्यमों को भेट स्वयंस्वर विवरण किया था ।

यद्यपि इन तीस-पैंतीस वर्षों के बीच हिन्दी साहित्य में उपन्यासों की बहुत-कुछ वृद्धि हुई है और उपन्यास कला का भी अच्छा विकास हुआ है, तथापि प्रस्तुत उपन्यास का अरथा जो बेरोद मालूम है, उसे नहीं गुन्यादा जा सकता। प्रेम और त्याग, गर्व और निष्कृष्टता का जो खानाबखश धार्मिक भूमिका पर अधिष्ठित हुआ है, यह पाठक के मन पर स्थायी प्रभाव डाल जाता है। दार्शनिक-व्याख्यान धार्मिक और सामाजिक स्थिति को समझने के लिए इस उपन्यास में पर्याप्त सामग्री है।

उत्पास के दिवा-शील लेखक ने अपनी प्रस्तावना में
उत्पास के कथन में बहुत-कुछ कह दिया है।

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

किया; और जिनकी प्रेम-पूर्ण सदानुभूति ने मेरे जीवन के विपरीत मार्ग को सारल बनाया; उन उस्तादों, सुशांठ बन्धु वर्धा-निवासियों युग सेठ चिरंजीलालजी के करकमलों में यह पवित्र उम्दा अनुवादक द्वारा प्रेमपूर्ण समर्पित है।" अनुवादक का परिचय हिंदीके छम्ह प्रतिष्ठित विद्वान और उनके निकट स्नेही पं. नाथूरामजी प्रेमी ने लिखा है। इससे अनुवादक और श्री० चिरंजीलालजी के सम्बन्ध की कल्पना की जा सकती है। हम इसके लिए पं. नाथूरामजी प्रेमी के और विशेष रूपसे श्री० गेदाखलजी सगर बड़नगर के आभारी हैं कि अनुवादक का परिचय प्राप्त हो सका और बढ़ दिया जा सका। उनका चित्र भी हमें श्री० गेदाखलजी से ही प्राप्त हुआ।

उपन्यास के लेखक श्री० सुशीलजी के भी हम आभारी हैं जिन्होंने सद्यः मात्रसे इसके प्रकाशन की अनुमति प्रदान की।

हम उपन्यास की बहुत पहलें-पकथन पूर्ण ही-छर आन आदिर का, लेकिन प्रेस संचालकों की अनुविधा में हम समय-प्रकाशित नहीं कर सके, इसका खेद है।

१० हुगलीकशरजी मुखनर, वीर मेरा भदिर दिष्टी के विदेश कृत्र है जिसमें इस मंगल की प्रति प्राप्त हो गयी है। हम इस-बीम स्थान में प्रकाशन करके दया, लेकिन हमें नहीं दे सका। इससे हमें बहुत ही दुःख है।

हमें बहुत ही दुःख है कि हमें इसका प्रकाशन नहीं कर सके। हमें बहुत ही दुःख है कि हमें इसका प्रकाशन नहीं कर सके। हमें बहुत ही दुःख है कि हमें इसका प्रकाशन नहीं कर सके।

मूल लेखककी प्रस्तावना



वास्तवमें एक छोटेसे साम्प्रदायिक उपन्यासके लिए प्रस्तावनाकी कोई जरूरत न थी; परन्तु वर्तमान साहित्य-क्षेत्रमें जो प्रस्तावना लिखनेकी एक रुढ़ि-सी पड़ गई है उसे उल्लंघन करनेका हममें माहम नहीं है। इस कारण 'महाजनो येन गतः स पन्थः' की उक्ति का आश्रय लेकर प्रस्तावनाके रूपमें हम दो बातें कहना चाहते हैं।

एक पाश्चात्य विद्वानने साहित्यकी उत्तमताभी कभीटी यह बतलाई है कि "जिस साहित्यके द्वारा योद्धेमें समयमें पाठकगण नाना प्रकारकी भावनाओं का लाभ उठा सकें वह श्रेष्ठ साहित्य है।" हमने भी अपने इस उपन्यासमें शक्तिभर इसी पद्धतिका अनुसरण करनेका यत्न किया है। ऐसे साहित्यमें एक और विशेषता होती है; और वह यह कि इतिहास वगैरह अन्य साहित्यके अनुशीलनमें पाठकोंके मनको जितना कष्ट उठाना पड़ता है उतना कष्ट ऐसे मनोरंजक कथा-साहित्यके अनुशीलनमें नहीं उठाना पड़ता; और, उसका वर्णनीय वस्तुकी छाप परोक्ष रीतिसे ही पाठकोंके हृदय-पट पर अंकित हो जाती है। एक लेखक अपने चिरसमयके अनुभवकी छाप कथा-साहित्यके द्वारा पाठकोंके हृदय पर जितनी स्पष्ट अंकित सकता है उतनी स्पष्ट अन्य जरियेमें शायद ही कोई अंकित कर सके। इसके अनेक कारणोंमें एक यह भी मुख्य कारण है कि कथा-साहित्य वांछित भावनाओंके वाण करनेका अत्यन्त सुन्दर और आकर्षक आचार है। इस प्रकारकी भावनायें हृदय पर अपना आचित्र्य इतनी अच्छी तरह जमा लेती हैं कि उसकी पाठकोंको

लोग विपद्योते मुक्त होकर शुद्ध आत्म-प्रेमका अनुभव करनेकी भावना रखें ।

इस उपन्यासमें इस बातके दिखानेका भी यत्न किया गया है कि उस समय वीरप्रभुका समाज पर कितना प्रभाव था । वीरप्रभुके प्रभुत्वका देख कर फिर यह आश्चर्य नहीं रहता जो प्रभु जहाँ जहाँ पधारते थे वहाँ वहाँकी जनता उनकी दिव्य प्रतिभाके तेजसे क्यों चकचोंधिया जाती । उस समय चाहे कैसी ही विरोध-विद्रोहपूर्ण परिस्थिति क्यों न होती, परन्तु जहाँ प्रभु उत्त ओर गये कि सध विरोधियोंको अपने आप ही प्रभुके चरणोंमें सिर झुकानेकी स्वयं प्रेरणा होती थी और फिर वे अपने सब मत-भेद सम्बन्धी वैर-विरोध-को भूल जाते थे । इस समय भी किसी किसी परन चाणूर-शील महात्माके सम्बन्धमें ऐसी ही कुछ कुछ बातें सुनी जाती हैं । तब वीरप्रभु-सदृश महापुरुषोंके अद्भुत प्रभावके सम्बन्धमें तो कहना ही क्या ! सनन्तमद्रके यहाँ जो विरोधियोंकी सभा भरी थी उसमें प्रभुके आते ही जो परिवर्तन हो गया वह एक बड़ा ही अद्भुत दृश्य है । इस बुद्धिवादके युगन Spiritual force आध्यात्मिक बलकी जैसी चाँहिए वैसी मान्यता न रहनेके कारण ऐसी घटनाओंमें लोगोंकी संका होती है; परन्तु, उन्हें जानना चाँहिए कि आध्यात्मिक बल एक ऐसा बल है कि उसके सामने सब बल निःसत्त्व हो जाते हैं । इस प्रभावका स्वरूप वे ही लोग देख सकते हैं जो ईश्वरत्वके स्वरूपको समझ चुके हैं । ऐसे अनुभवमें न आनेवाले विपयकी बुद्धि द्वारा हमें निराशा करना व्यर्थ है । स्पिनोजा (Spinoza) नामके एक तत्त्ववेत्ताने बहुत ठीक कहा है — To divine God

is to deny him. अर्थात् ईश्वरकी व्याख्या करना मानो उसे अस्वीकार करना है । ' सचमुच जब उसका स्वरूप ही बुद्धिसे कल्पनामें नहीं आ सकता तब उसका प्रभाव, जो स्वरूपसे उत्पन्न होता है, कैसे कल्पनामें आ सकता है । यह युग शरीर-बल, और कुछ थोड़े विज्ञान-बल या बुद्धि-बलको समझने लगा है; परन्तु आध्यात्मिक-बलके समझनेके लिए इसे अब भी बहुत कुछ प्रगतिकी आवश्यकता है । आर्य-बलके सामने अन्य प्रकारके सब बल अपना अधिमान भूल जाते हैं; और इसी लिए शास्त्रकारोंने कहा है कि बड़े बड़े राजा-महाराजा और चक्रवर्ती भी अहम-बलशाली महात्माओंके चरणोंको अपने मुकुटोंकी प्रभासे प्रदीप्त करते हैं । वैराग्यु भी ऐसे ही उच्च श्रेणीके श्रेष्ठ महात्मा से और इस कारण उनके दिव्य प्रभावका उपभोगकी सीमासे रह कर जितना गान बिगा जाय सोडा है ।



श्रीमती सुगणाशर्दे बडजाते



वर्ष :

पृष्ठ :

वि० सं० १९१४,

वि० सं० १९१५

ता० २१ मार्च १९१८

स्व. श्रीमती सुगणाबाई

अजमेर मेरगडा में रुदनगढ़ नामक एक छोटा-सा ग्राम है। वहाँ पर श्री मन्नालालजी पाटनी और उनका परिवार रहता था। उनके दो पुत्र श्री जुहामलजी तथा हंसराजजी और दो कन्याएँ थी। उनमें से एक सुगणाबाई थी। श्री मन्नालालजी का परिवार बरार में अयोला जिले के बाभिम नामक ग्राम में आकर बस गया। उनके बंशज आज कुशठ व्यापारी, सम्पन्न तथा सुखी हैं।

श्रीमती सुगणाबाई का जन्म विक्रम संवत् १९२४ के आस-पास हुआ और विक्रम संवत् १९४७ में श्री. जेट्ठजी बहजाने के साथ उनका विवाह हुआ। उनकी शिक्षा आदि के विषय में आज के ५० वर्ष पूर्व की सामाजिक स्थिति की कल्पना ही उलर दे सकती है। जो भारतीय समाज, विशेषकर राजस्थान में रामेकाला भारतीय समाज, आज भी स्त्री-शिक्षा के विषय में इतना संशयी तथा उदासीन बना हुआ है, उसकी कल्पना पूर्ण की जाकर ये विषय में कुछ न कहना ही उचित है।

श्री. जेट्ठजी के पिता रुदनमलजी अपने बहुत बंशजों के साथ वर्षों में अजर वरहे का व्यवसाय करने लगे थे। लोगों की बात कि पिता के पौंदर्य पर बाप ही श्री. जेट्ठजी का वर्णन हो गया। अब सुगणाबाई के विवाह हो जाने

उनके आशीर्वाद से चिरंजीवालयी का परिवार समृद्ध तथा सन्तान से । चिरंजीवालयी के तीनों पुत्रों का एक पुत्री का विवाह हो गया है । कन्या शांता कुमारी विवाह होन है । अष्ट पुत्र श्री प्रतापचन्द्र एक सार्वजनिक कर्ता तथा मित्रासार व्यक्ति हैं । सबसे पुत्र श्री विजयकुमार का कार्य में काफी दिक्कतों काते हैं और परिवार को ही देखभाल करते हैं। इन के दो पुत्र हैं, जेनेद्र कुमार तथा नि. ११ कुमार हैं । छोटे पुत्र श्री हिरोकुमार एक काम की पेशा कर चुके हैं; इन के एक बच्चा है । श्री ८ चिरंजीवालयी दो बेटे-पुत्रों कर चुके हैं और उनकी बही पुत्री श्री राजपती राष्ट्रीय अंदोलन में एक बार बेल हो आई है ।

इस यही जगह काते हैं कि अपनी मजदूरी की म. वनाओं का तथा सामान-मेवा, अतिरिक्त-मात्रा आदि गुणों चिरंजीवालयी में जैसा वाकन किया और उन्हें निम वा है, लाल करते भी हिंदी भी इनके आदर्श को पालन के लक्ष्य

स्व. पं. उदयलाल कासलीवाल



पंडितजी संस्कृत ग्रन्थों के अच्छे अनुवादक थे।
 अरुणा से ही उन्होंने इस ओर कदम बढ़ाया था। उनके
 क्रिये हुए धर्मसंग्रहशास्त्रकाचार, धन्यकुमारचरित्र
 भद्रबाहुचरित्र इन तीन ग्रन्थों को बनारस के माई बाई
 जैन ने प्रकाशित किया था। उसी समय संशय-तिग्गि
 नाम की एक सतंत्र पुस्तक भी पंडितजी ने लिखी थी और
 मित्र छात्रा गेदायादजी सराफ बड़नगर बाछो ने प्रकाशित की है।
 उसमें बीस-पन्च की मान्यताओंका प्रतिपादन और तेहदण्ड
 निषेध किया गया था।

बम्बई में कुछ समय रहने के बाद पंडितजी ने शत्रु
 विहारीलालजी कठनेश के माधे में जैन माडिल प्रसारक कार्यालय
 की स्थापना और मन-प्रकाशन का काम जारी किया। कठनेशजी
 उस समय नोबलियर कमिटी में कार्यरत करने थे और अवकाश के
 समय हम कार्य की दायिबा गठन थे। पंडितजी करना प्रायः सारा
 समय इनमें ही नया पंडित-प्रकाशन पवनदत्त काव्य
 १९१५-१६ नामकुमारचरित्र काव्य, माईगात्र क
 पद्माशचरित्र १९१६, १७ नामदत्त नेमिपुराण, १९१८
 १९२० नकास कथा नाद-प्रकाश का अनुवाद और उनका
 १९२१ नामदत्त काव्य १९२२ नामदत्त काव्य कथाकोश का
 अनुवाद १९२३ नामदत्त काव्य १९२४ नामदत्त काव्य तीन भागों
 का अनुवाद १९२५ नामदत्त काव्य १९२६ नामदत्त काव्य और मत्स्यमन
 चरित्र और एकत्र की १९२७ नेमिचरित १९२८ अनुवादों को मिले

प्रेरणा से सुप्रसिद्ध देशभक्त सेठ ब्रमनाथजी बजाज ने उन्हें पन्द्रह सौ हजार रुपये की पूंजी देकर उषन पुस्तक-भेडार को एक विशालकर दे दिया। इस पूंजी के मित्र जाने से कालबादेवी रोड पर एक बड़ी दुकान खोल दी गई और ग्रन्थ-प्रकाशन का कार्य स्वर तेजी से जारी किया गया। सन् १९२१ तक पंडितजीने अपनी ग्रन्थ माला में उपन्यास, नाटक, इतिहास, अष्टाध्याय, नीति आदि के २६ ग्रन्थ प्रकाशित किये और गौरी-पुस्तक-भेडार हिन्दी का एक गण्य ग्रन्थ प्रकाशक गिना जाने लगा। पंडितजी की सचाई, प्रामाणिकता और परिश्रमशीलता का ही यह परिणाम समझना चाहिए जो अपनी छोटीसी जिन्दगी में ही वे इतना कर सके और इतनी स्वाति अर्जन कर गये।

पंडितजी मेरे बहुत ही प्रिय मित्रों में थे। मुझे चाहते भी थे और मानते भी स्वर थे। एक ही व्यवसाय करते हुए भी हममें कभी प्रतिस्पर्धा का भाव नहीं उठा। उनकी शायद ही कोई ऐसी लिखी और प्रकाशित की गई होगी जिसमें उन्होंने मेरी सम्मति नहीं ली हो। बहुत-सी पुरतके तो मेरी प्रेरणा से ही उन्होंने लिखवाई और प्रकाशित कराई थी। उनकी कोई बात मुझ से छुभी नहीं थी, सब कुछ खोदकर सामने रख देते थे। बड़े ही सरल और उदार थे। सदा प्रसन्न रहते थे और जहाँतक बनना या चिन्ताओं को पास भी न फटकने देते थे। नाटक सिनेमा देखने के बड़े शौकीन थे। शायद ही कोई रुसाइ गया हो कि वे नाटक देखने न जा पाये हों। तेरने की बछामे पारंगत थे, मलबार हिल की 'बाण-जंगा' में जबतक पानी बहुत बहाव तेरने के लिये जाते थे। व्यापार में

हे उन प्रभुके दर्शनसे धनदत्त भेट जैसे मछोंकी नस-नसमें-रोम-रोममें अगर आनन्द, शान्ति और सन्तोषका बनजाना ही उक्त उस आनन्दको कम करना है । हम तो क्षणिक परिस्थितिसे होनेवाले आनन्दके सिवा और दूसरे आनन्दकी कल्पना ही नहीं कर सकते धनदत्त सेठका वह आनन्द क्षणिक न था-स्वार्थ-तृप्तिसे होनेवाले विक्र को लिये हुए न था । हम तो इसके सम्बन्धमें केवल इतना ही कह सकते हैं कि वह आनन्द अरुण और अशोकिक था ।

धनदत्त सेठ आवस्तीके एक प्रसिद्ध श्रावक हैं । भारतके अनेक बड़े बड़े शहरोंमें उनको दूकानें बड़े जोर शोरसे चल रही हैं। इसके सिवा आवस्तीकी सारी प्रजा एक स्वरसे इस बातको स्वीकार करती है कि सौ पृथ्वी-मण्डल पर धनदत्त जैसा सचरित्र, उदार दानी और धर्म-आपुर्ण भाग्यसे ही कोई निकलेगा । धनदत्तने जो शासनाभिपति महावीर प्रभुके मुँहसे धर्म तथा आचरण-सम्बन्धी उपदेश सुना है उससे उनके संसार-ताप-तप्त हृदयमें एक नई ही भावनाका प्रचल उदय हो उठा है । उन्होंने स्थिर किया है कि " फिरसे प्रचार किये गये इस पवित्र जैनधर्मकी विजय-यताका सारे संसारमें स्थायी रूपसे फहराना चाहिए । इसके लिए नन-मन-धनकी चाहे जितनी आहुति देनी पड़े उसे देनेके लिए मैं तैयार हूँ । यदि जैनधर्मकी उन्नति और प्रचारके लिए इस शुद्ध जीवनका या धन-जन-यशका बलिदान करना पड़े तो उसे मैं आनन्द पूर्वक कर सकता हूँ ! जिस तरह वन सके जैनधर्मका प्रभावना करके उमे मारे मसागमें फैलाना और प्राणी-मात्रको उसकी ठंडी छायाके नीचे आश्रय देना, अब यही एक मात्र मेरे शेष जीवनका

प्रभुवा आगमन

महान्त है ।" इस प्रकार धनदत्तने अपनी आत्म-साक्षीसे महान् प्रतिज्ञा की है । मगवान् के एक क्षण भरके उपदेशसे धनदत्तका जीवन-प्रश्न ही पलट गया ! यहाँ हम यह निर्णय नहीं कर सकते कि इस जगद् प्रभुके अद्भुत उपदेशके माहात्म्यका वर्णन करें या धनदत्तकी आत्म-शुद्धिका परीक्षण करें ।

सहस्र पाठकाल, जगद् बनउत्तर कि तुम्हें किसी प्रकारका सुख प्राप्त हो तो उसे अकेले भोगनेमें तुम अधिक आनन्द लाभ कर सकोगे या अपने मित्रों एवं कुटुम्बियोंके साथ भोगनेमें ! कल्पना करो कि तुम एक सुन्दर नाटक देखने गये, उस समय तुम्हें अकेले देखनेमें अधिक आनन्द मिलेगा, या अपने सहस्र स्वभाववाले प्रेक्षियोंके साथ बात-चीत और हँसी-ठिठोहके सुखके अनुभवपूर्वक देखनेमें ! तुम्हें अपने घरके एक कोनेमें बैठ कर मिठाई खानेमें अधिक आनन्द जान पड़ेगा या अपने मित्रोंके नखमें बैठ कर सबके साथ प्रसन्नतापूर्वक खानेमें ! समझो कि तुम निर्मल चाँदनीवाली मधुर रात्रिमें एक सुन्दर बागमें घूम रहे हो, उस समय क्या तुम्हारी ऐसी इच्छा न होगी कि इस मधुर आनन्दमें भाग लेनेवाला हमारा कोई मित्र या प्रेमी यहाँ होता तो कितना अच्छा होता !

कौन जाने ऐसा क्यों होता है ! पर मनुष्य-स्वभाव ही ऐसा है कि वह आनन्दके बँटवारेमें हनगता नहीं जाता । धनदत्त सेठकी महान्तर प्रभुके दर्शनसे जो आनन्द हुआ या उससे उनके मनमें भी यही भावना हुई कि जिन अर्द्ध आनन्दका अनुभव मैं अपने शहरके-
अपनी अन्तर्मुखिक-अन्तर्मुखिकों के भी कर सकूँ वे कितना अच्छा

उनके हृदयमें जो प्रवृत्तियों के प्रभु के पुत्रानेकी इच्छा थी, जो
केवल प्रभुओंके हृदयमें उन्हें इस प्रकार दिखानेके
मन्त्रपुर होना पड़ा था । जो दिखाने-दिखाने उनकी आँखोंमें प्रे-
म की धार बह जाती । हाथ फैलाने लगे । हृदय भावने का
बड़ी कठिनाईमें उन्होंने वह पत्र पूरा करवाया । इसके बाद जो
एक विशाल-पात्र नौकरोंके पुत्र कर उन्होंने उसमें उन सभी
महानिष्ठ प्रभुके नाम वदुचा देनेको कहा । प्रभुके उस समयके
आत्म-ज्ञानकी ओर दृष्टि देनेमें इस पत्रके दिखानेकी कुछ जरूरत
थी; कारण प्रभु तो विशेषकी वस्तुओं और उनकी परिधिमें
अपने ज्ञान-नेत्रोंमें जो ही देख रहे थे । एक कागज का टुकड़ा उन
ज्ञानमें क्या कोई नई वृद्धि कर सकता था ।

पत्र छेड़नेवाला जिस समय राजगृहमें पहुँचा उस समय
प्रभु अपने शिष्योंके साथ आनन्दोत्सवों की ओर विद्यमान होनेके छिड़ते
हो रहे थे । उसने पहुँच कर बड़े विनयके साथ पत्रको प्र-
दत्त किया और वह पत्र उनके चरणों पर रख दिया । उस समय उस
आँखोंमें आँसू भर आये । प्रभु ने पत्र पढ़ा और उसमें जो
लिखे होनेके प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में
रिखा । उन प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में

प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में

प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में

प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में

प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में प्रभु के हृदय में

दा न पन्तु ल मे दे य

प्रभुके पास जो मनुष्य पत्र ले गया था उसने की

राजगृह आकर यह सब हाल धनदत्तने कह सुनाया । पढ़ चुकनेके बाद प्रभुने किम गमायाने विचार किया था और उस समय उनकी मुद्रा कैसी गान्ध थी; तथा थोड़ा ही देर बाद प्रभु किस दृढ़ताके साथ उत्तर दिया था; इत्यादि अब से इति पर्यन्त बातें उसने धनदत्त सेटको सुनायी । यह बात पाठकों पर विदित कि धनदत्तने केवल बाह्य संयोगोंकी भयङ्कताको देख कर ही मरवान्मे न आनेकी प्रार्थना की थी; पर उसके हृदयमें तो बड़ी प्रभावना थी कि प्रभु श्रावस्तीको पवित्र करे । बाह्य प्रार्थना अस्वी होनेके साथ अग्ने हृदयकी प्रार्थना स्वीकार हो जानेसे धनदत्त उस समय कितना आनन्द हुआ होगा उसका अनुमान हम नहीं कर सकते । धनदत्तने यह जान कर, कि प्रभु अवश्य पधो बड़ी धूम-धामके साथ प्रभुके स्वागतकी तैयारी करना आरम्भ कर दि

धनदत्त बड़े पवित्र-हृदय और सच्चे मत्त थे; पर यह बात भी जाननेकी नहीं है कि ये वे मनुष्य । प्रभुके इस प्रकार दृढ़तापूर्ण उठे चुकनेके बाद भी जब वे देखते थे कि श्रावस्तीके ब्राह्मणोंक विरोधियोंका—बहु दिनदिन बढ़ता जा रहा है, उनकी प्रतिकूल अधिक-अधिक गभीर होती जा रही है जब बहुत ही निराश जाने थे । मनुष्योंकी दृढ़ताकी सीमा होती ही कितनी है ' ये च

मणिमठ

जिन्ना दन विग्रहमेका प्रदान को; एतनु सिरोधियोकी बड़नी दुई
संख्या और उनप्रयोकी निरंतर होनेवाली वसंतों देण का उन समय
हृदयको दयवान् दनने लगेन को साधारण दान नहीं है । जो
ऐसा ऐसे नयेगोने भी बड़ी दृष्टा और निर्भवताके भाव छाती ठीक
ता गड़े रहते हैं उन्हें मनुष्य नहीं किन्तु देव कहना चाहिए ।
धनदत्त अपनी शक्ति-भर प्रदान करने, पर जब ये कामी-रामी घरता
जने तब मिर पर हाथ रख का भावी स्थितिके सम्बन्धमे विचार-मग
हो जाने थे । उस समय उनका अन्तःकरणके भीतरसे मानों कोई
कहता था कि " धनदत्त, निर्बल दनना उचित नहीं है । यह निर्ब-
लता अश्रमासे ही उत्पन्न होनी है । क्या तुझे प्रभुके वचनों पर
श्रद्धा नहीं है ! जब स्वयं प्रभुने ही आनेकी घोषणा की है फिर
तुम क्यों घबराते हो ! प्रभुके अंते ही ये सब अलुबिषय-प्रतिकूलताये
क्षम-मरने नष्ट हो जायंगी । "

इन उल्लाह भरे शब्दों पर विधात लाका धनदत्त फिर नये बल
और नये उल्लाहके साथ काम करने लग जाते और आदम-समाज
तथा सनोभद्रकी शत्रुताके खोड़ी देखके उधे सर्वथा भूल जाते ।
धनदत्तने भगवान् के सकारण अनन्त धन-भण्डार खर्च करना प्रारंभ
का दिया । शम्भु, नन्द और गण्डर्व गण्डर्वने नये, सुन्दर और
बहुमूल्य वस्त्रों को धन दे बन्दे पर देना देखा दिये ।

उन दाने बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे
बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे

बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे
बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे बन्दे

रख कर वहीं मक्तिसे प्रणाम किया। प्रभु उस समय शिष्य
 शंकाओंका समाधान कर रहे थे। प्रभुकी सुधा-सदृश वाणी सुन कर
 मणिमद्वरा आत्मा एक नये ही प्रकारके शान्ति-रमसे दबीभूत हो
 लगा। प्रभुके मुख-चन्द्रसे जो अमृततुल्य उपदेशकी धारा बह रही
 थी उसका पान करनेके लिए मणिमद्वरकी इच्छा उत्तरोत्तर अधिक
 अधिक बढ़ती गई। इस कारण मणिमद्वर बड़ी देर तक वहीं बैस
 रहा। इसके बाद जब उसने देखा कि अब रात हुई जाती है तो
 वह अपने गृहकी ओर वापिस छोटा।

घर आकर वह विचारने लगा कि मैंने जो धीरे प्रभुके दर्शन
 किये और उनका उपदेश सुना, सो इसे क्या पिताजी भयंकर जरात
 समझेंगे? नहीं नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। धीरे प्रभुकी पति
 मूर्त्तिके दर्शन काकेतो उल्टा अपनेको भाग्य-शाली समझने लगेंगे
 तब नहीं जान पड़ना कि मैंने और कौनसा अपराध किया है! इस
 प्रकार विचार करने पर भी जब वह कुछ स्थिर नहीं कर पाता तो
 सुटे हृदय रोनेका यत्न करता था, पर इसके बाद ही वह अपने
 शिष्योंको समझ कर मोचना कि यदि इस समय मैं रोने लगूंगा तो
 पिता तथा माई-पंडित दयाके बड़े-बड़े मुद्र पर कोपित होंगे
 यह विचार कर वह हृदयके भारको हृदयमें ही दवानेका यत्न
 करने लगता था।

'प्रभु... ..' । 'प्रभुकी च... ..
 '... ..' । '... ..'
 '... ..' । '... ..'

मणिभद्रका जुटकारा

मणिभद्र इस समय एक खिड़कीमेंसे अलत होने हुए चन्द्रमाकी ओर देख रहा है। गर्मियोंको मधुर आवाज़ या हवाकी मृदु लहरें उसके प्यानकी न तोड़ सकीं। विचार-सागरमें वह इतना मग्न हो गया कि उसे इस बातकी भी खबर नहीं रही कि वह स्वयं कहीं कैसी अवस्थामें है। वह इस समय किसी गंभीर विचारमें अवश्य है; परन्तु इतना भारी विचार वह किस विषयमें कर रहा होगा? यह सही है कि वह उस समय भूख-प्याससे बड़ा फट पा रहा है, तो क्या वह इसी विषयके विचारोंमें मग्न है? नहीं।

वह विचार करता है कि ये लोग इन तरह मुझे कब तक बन्द रखेंगे। प्यासके मारे मेरा गला सूखा जा रहा है, क्या ये लोग मुझे एक घूँद पानी भी न देंगे? अल्लु, पानीकी घूँद न दें तो न सही; पर क्या ये मुझे योगिराजकी उस विश्वमोहिनी मूर्तिके दर्शन करनेके लिए भी न जाने देंगे? प्यासे रह कर मर जानेकी मुझे चिन्ता नहीं; किन्तु एकबार प्रभुके दर्शन किए भी कर डिये होते तो यह मैं बड़े डर के साथ उमरवला हो जाती। कोई कैना ही मनेक... उमरे प्रभुके दर्शनमें जुड़ा रहना — इसके समय... अह, जबमें मैंने... अह, जबमें मैंने... अह, जबमें मैंने...

कर अपना नर-वस्त्र मारन कोते । और हाय ! उस मनष में
एक ऐसा मन्द-भाव बन रहा जो मुझे ऐसा करने की आज्ञा न
जायगी । हाय ! किम भगदे मे बहुत कर्म मेरे उदर प्राये हैं
मेने ऐसा कौनसा पोर धार किया है कि त्रिममे मेरे शिष्ट वस्तु
दर्शनमें निग्न आया ! जब प्रभु वरु मरु रानीय हंसोकी मोहिनी
पारो ओर फैलाने हुए शहरमें प्रवेश करेंगे, मरु गंधीर रानी
प्राणोंकी मोती हुई आशाकी जागृता कोते और इस भुद जन-मन
के सामने सुग-सदृश शान्तिकी वर्षा करेंगे उस मनष में ही ऐ
पारी बच रहूँगा जो वहाँ नदी बहने महुँगा । न जाने कि
अदराधकी मुने यह ऐसी मयकर और सख्त मजा ही गई है ! इस
प्रभुका यह मरु और परित्र व्यवहार, प्रभुकी वह भेद-मदृश गे
वाणी, प्रभुकी वह अगेनिक गंधीरता और उदारता मुने कि
कमी देखनेको मिलेगी-मैं फिर भी उनके दर्शन का भाग्यमान
सकूँगा ! मणिमद एक ओर ता इस प्रकारके विचारोंमें डूरा र
था, दूसरी ओर भूख-प्यासका कट सदाता था, और माष ही प्र
प्यानमें छीन रहता था । इस प्रकार दिन-भरके केश और शोकसे
कर अन्तमें वह निद्राके बश हो गया । निद्राके बेगने सुग-म
डिए उमे अपने अग्न कर दिया । मणिमद उस नमष भी हस्
मृष्टिमें नाना तरहकी कलनाये कर हा । । ।

[illegible]

मणिभद्रका छुटकारा

दरवाजेकी ओर दृष्टि डाल कर देखना है, कि इतनेमें कोठरोंके किन्नाड़ खुल गये और दरवाजेमें एक स्वर्गीय सुन्दरी आकर खड़ी हो गई। यह आश्चर्य-चकित दृष्टिसे टफटकी लगाये उसकी ओर देखना ही रह गया।

यह सुन्दरी कौन है, इसके कहनेका साहब हम नहीं कर सकते। मणिभद्रको इस सुन्दरीके दर्शन करके ऐसा जान पड़ा कि अस्ता-घटोन्नत चन्द्रमाकी जो निर्मल चाँदनी चन्द्र दरवाजे पर पड़ रही थी वही अब खी-शीर धारण कर मेरे सामने आ खड़ी हुई है। यह सुन्दरी बालिका थी या युवती, इसका भी निश्चय करना उस समय कठिन था। कारण उसकी बिजरी हुई, काली निविड़ केश-पाशोंमें उसका चाँद-सा सुन्दर मुख स्पष्ट रूपसे दिखाई न पड़ रहा था। यह एक सफेद माड़ी पहने हुए थी। उसके गलेमें मोतियोंका सुन्दर हार शोभा दे रहा था। मणिभद्र उसे प्यानपूर्वक देख कर पहचाननेका यत्न करता है कि इतनेमें वह स्वयं ही उसके पास आकर खड़ी हो गई और मणिभद्रके हाथोंको अपने हाथोंमें लेकर स्निग्ध दृष्टिसे उसकी ओर देखती हुई गीरेसे बोली—“चुन रहिए, यह बोलनेका समय नहीं है। तुम मुझे पहचान नहीं सकते। और न इस समय पहचानने की जरूरत ही है। ज्यादा देर तक बातचीत करनेका यत्न करोगे तो हम दोनों ही पकड़े जायेंगे। मणिभद्र, सब तो कहो, क्या तुम ही न जानेके दर्शन करनेके लिए आना चाहते हो।”

जान-ना, जान-ना और उसकी बातोंके कारण मणिभद्रके मुँहसे एक शब्द भी न निकला। उसे ऐसा अनुभव होना लगा कि उसकी

प्राणोंमें-हृदयमें-गहरे अन्तरङ्गमें मानो बड़े जोरसे विजलीका प्रखर वेग दौड़ रहा है। वह उठर देनेके बड़े ठठ कर खड़ा हो गया। सुन्दरीने पहलेकी मॉनि उसके हाथोंको अपने हाथोंमें लेकर बाई सावधानीके साथ धीरेसे कहा कि मणिमद्र, जाओ, जितना जल्दी बन सके मागनेका यत्न करो। तुम्हारे पिताकी बुद्धि तो भट हो गई है। वह सूर्यके प्रकाशके सामने महीन बख लगा कर रक्षाका यत्न कर रहा है। तुम्हारे घरानेमें तुम्हारा पिता कलंकित है। मेरे इस कहनेमें तुम्हें उद्वतता जान पड़े तो मुझे तुम क्षमा करना। तुम-सदृश कर्मवीर, उत्साही और उदार युवक जो जैन शासनकी प्रभावना, बढ़वारी और उन्नतिके लिए स्वार्थ त्याग करनेको तैयार न हो तो मैं कहूँगी की प्रभुका जन्म और विहार इस पृथ्वीमें निष्फल है। जाओ मणिमद्र, जाओ, मैं तुम्हारा स्पर्ध समर्थ ठे रही हूँ। यह ताड़ी लो। हों देखो, सामनेके दरवाजेमें होकर जानेक यत्न न करना, कारण मुझे भय है कि कोई विपत्ति सामने आक खड़ी न हो जाय। इस पासके दालानमेंसे बागमें उतर कर ओर पूर्वकी ओरका दरवाजा इस तालीसे खोल कर निकल जाओ। तुम्हारे मार्गमें इस समय कोई विघ्न डालनेवाला नहीं है। जाओ, बन सके उतनी जल्दी इस घरको छोड़ कर चले जाओ। इस प्रकार बतें करते करते यह सुन्दरी मणिमद्रका हाथ पकड़ कर उसे छत पर ले आई। उस समय उस सुन्दरीका मुँह चाँदनीमें स्पष्ट दिखाई दे रहा था। मणिमद्रने एक बार फिर उस सुन्दरीको पहचाननेकी कोशिश की। उसका शरीर रोमांचित हो उठा। उसकी आँखोंमें आँसू भर

गये । उत्तने उस छन्दरीको ओर दृष्टि कर कौपती हुई
तावाजसे कहा—

“छन्दरी, तुम क्या मुझे पहचानती हो ? तुम्हारे इस उपकारका
दरवाजे में किस तरह चुका सकूँगा ! मुझे जान पड़ता है कि तुम
मानवी नहीं, किन्तु देवी हो । जय ! महावीर भगवानकी जय !
वि, मेरी यह कानना है कि तुम्हारा मनोप्य पूर्ण हो । मैं अब
जाता हूँ ।”

“जाओ,—मणिमद, जाओ; जिस मार्गमें आनन्दका प्रवाह बह
जा है और जिस मार्गमें उद्वेगका नाम-निशान भी नहीं है उस
मार्गमें जाओ; जिस मार्गमें भैरी-भावकी शीतल और मृदु-छहरोंका
आनन्द मिठ सकता है और जिस मार्गमें चिन्ता-द्वेषकी लेश-मात्र
भी ज्वाला नहीं है उस मार्गमें जाओ; जिस मार्गमें ज्ञानके भण्डार
मुझे दूर पड़े हैं और जिस मार्गमें गर्व और अहंकारको जगह नहीं
उस मार्गमें सँभो और निर्मय होकर जाओ; जिस मार्गमें आत्माकी
हस्ताक्षर हो सकती है और जिस मार्गमें अव्यक्तिका सन्देह भी
नहीं गिना जाता है, उस मार्गमें खलंड जागृतिके साथ विचरो;
जाओ, संसारके प्राणियोंके दुःख-ताप-काहको दूर करो और जगत्में
अनित्यता, दयाका और धर्मका सावधान स्मरण करनेमें सहायता
दो । जाओ मणिमद, सपने महावीर भगवान् आवर्ताने जाकर धर्मका
विषय उनसे करनेके लिए लोगोंके द्वार द्वार पर जायेंगे, तुम भी
उसी मार्ग पर जाओ और आत्मको हृत्कर करो, अनन्त मोक्ष-मुक्त
प्राप्त करो और बगदके दुःख दूर करनेके लिए आनन्द-मुक्तका बखिराव

करो । जाओ,—मणिमद्र, इससे अधिक मैं तुम्हें कुछ नहीं
सकती । वीर प्रभु तुम्हारे मार्ग-दर्शक होंगे । ”

इतना कह कर सुन्दरीने मणिमद्रका हाथ छोड़ दिया और
रास्ता बतानेके लिए वह स्वयं नसैनीके रास्ते नीचे उतराने लगी
मणिमद्र भी दिङ्मूढ़ हुएकी भाँति उस सुन्दरीके पाँते पीछे रह
छगा । देखते देखते वे दोनों नीचे उतर आये और बागके दरवाजे
पास आकर खड़े हो गये । सुन्दरीने मणिमद्रके पासमे ताबीर
स्वयं ताला खोल दिया । बहुत ही धीरेसे उसने दरवाजेके किनाड़े पे
इमके बाद सुन्दरी दरवाजेकी एक ओर खिसक कर खड़ी हो
मणिमद्र दरवाजेके बाहर होनेके पड़ले एकबार फिर सुन्दरीके
चन्द्रके अवलोकनका लोभ संतरण न कर सका । उसने फिर
देर तक उस सुन्दरीके बिम्बरे हुए घन-निविड़ कांठे केशों
निर्मल-स्निग्ध-विस्तृत नेत्रोंसे मण्डित स्वभाव-सुन्दर मुखको नि
आश्चर्य-चकित दृष्टिसे देखा । जाते जाते मणिमद्रने कॉपती
आवाजसे सुन्दरीको लक्ष्य करके कहा—

“ देवि, तुम्हारी आज्ञाको स्वीकार कर तुम्हारे बताये हुए
में जाता हूँ; परन्तु मनमें इस बातका दुःख रह जायगा कि
उपकारका बदला मैं किस तरह चुका सकूँगा ! दयाप्रयी,
महिष्यमें कभी तुम्हारी पवित्र मूर्तिके दर्शनकी इदममें प्रबल
हो उठे तो क्या उसके लिए कोई रास्ता बतलानेकी कृपा करे
या ये ही दर्शन अन्तिम दर्शन होंगे । ”

मणिभद्रका छुटकारा

सुन्दरीने विरमयके साथ अगना नत मस्तक ऊपरकी ओर उठा त मणिभद्रकी ओर देखा और धीरेसे आँखोंको नीचा कर बड़ा लीमा और मधुर आवाजसे कहा — “मैं फिर कब मिलूँगी यह पूछने दो ! मैं यह निश्चित तो नहीं कह सकती कि फिर मिल सकूँगी या नहीं; परन्तु हृदय भीतरसे विश्वास दिला रहा है कि बहुत करके मिल सकूँगी । आगे प्रभु जाने । ”

इसके बाद वह मणिभद्रके उत्तरकी राह न देख कर लौट गई । मणिभद्र भी दरवाजेसे बाहर निकल कर सड़क पर पहुँच गया । इहाँसे उसने अगने दिताके विशाल, नीरव गूँइकी ओर एक नजर फेंकी, जाता हुई उस ज्योतिर्भयी सुन्दरीकी ओर देखा और अन्तमें एक लंबी साँस लेकर बड़ा शीघ्रताके साथ वह आन्न-वनकी ओर चढ दिया ।



करती है उसी मौनि नाना अङ्कारोंमें सजी और गज-गन्ति है उकर लचकती एक पोड़सी युवती मन्द मन्द मुसक्याती हुई उमंग और आ रही है। इस आगता नई युवतीने अपना एक हाथ सुन्दर कपड़े पर किर रक्खा और दूसरे हाथसे उसे अपने हृदयमें दबा कर बड़ी मधुरताके साथ कहा—

“ बहिन तुम्हारे सादर, धैर्य और उद्योगकी मितनों में जाय उतनी ही पोड़ी है। बहिन स्नमात्रा, मैं सच कहती हूँ। तुम्हारे बिना और किसीसे ऐसा जोखम भरा कार्य नहीं हो सकता था। अपने घरमें अपने ही माता-पिता द्वारा कैद किया गया कैद सहजमें छुटकारा पा जाय और बड़ मां तुम जैसी नितो अकल्ये हाथोंसे, इसकी तो कोई शायद ही कल्पना कर सके। स्नमात्रा घबरानेकी कोई बात नहीं है—मैंने जो ये सब बातें आँखोंसे देखी हैं, उनके लिए डरनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं चाहती तो टाँ रोक भी सकती थी; परन्तु मैंने ऐसा नहीं किया, और चुपचाप कुठ में देखती रही। मैं क्यों नेरे इन कार्यमें नहीं पड़ी, और क्यों नहीं मैंने इसमें चित्र डाला, इन सब बातोंका चिन्ताके साथ कहने यह उचित समय नहीं है। इन समय यहाँ पर खड़े रह कर बातचीत करना भी याच्य नहीं है। कारण एक दागोंके उठानका समय हो गया है। इसका मतलब है कि जगह देख लेगा। हमारी बड़ी बुरी इना इती। इन कारणों से हम यहाँसे कुछ दूरी पर चला चला। इसका मतलब है कि मायानी रखनी चाहिए कि हमारे जेबों, किनारों, स्नमात्रा में खराब न पड़े। इसके सिवा और एक बात इस जगह नहीं हो सकती। ”

करती है उसी मौनि नाना अङ्कारोंसे सजा और गज-गनिसे इन
 ठहर छचकती एक पोटरी युवती मन्द मन्द मुसक्याती हुई उसीको
 ओर आ रही है । इस आगता ने युवतीने अपना एक हाथ सुन्दरीके
 कन्धे पर फिर रक्खा और दूसरे हाथसे उसे अपने हृदयमें दबा का
 बड़ी मधुरतासे माप कहा—

“ बहिन तुम्हारे मादम, बैर और उद्योगकी भितनी प्रशंसा की
 जाय उतनी ही पोड़ी है । बहिन रत्नमाया, मैं सच कहती हूँ कि
 तुम्हारे बिना और किसीसे ऐसा जोखम भरा कार्य नहीं हो सकता
 था । अपने घरमें आने की माना-विता द्वारा कैद किया गया कैदी
 महजमें छुटकारा पा जाय और बड़ में तुम जैसी निरी अश्लुके
 हाथोंमें, इसकी तो कोई शायद ही कल्पना कर सके ! रत्नमाया,
 घरानेकी कोई बात नहीं है—मैंने जो ये सब बातें आँखोंसे देखली
 हैं, उनके छिपे छानेकी आवश्यकता नहीं है । मैं चाहती तो तुम्हें
 रोक भी सकती थी; परन्तु मैंने ऐसा नहीं किया, और चुपचाप सब
 कुछ मैं देखती रही । मैं क्यों तेरे इस कार्यमें नहीं पड़ी, और क्यों
 नहीं मैंने इसमें निग्रह डाला, इन सब बातोंका विस्मयके साथ कहनेका
 यह उद्देश्य समय नहीं है । इन समय यहाँ पर खड़े रह कर
 बातचीत करना भी नहीं है । कारण यह है कि जो

हमको कहें इन बातोंसे दया लगा तो
 कि हमको यह बातें बताने से हम यहाँमें कुछ
 कि हमको यह बातें बताने से हम यहाँमें कुछ
 कि हमको यह बातें बताने से हम यहाँमें कुछ
 कि हमको यह बातें बताने से हम यहाँमें कुछ
 कि हमको यह बातें बताने से हम यहाँमें कुछ

सुन्दरी

इस दूसरी युवतीको पहचाननेमें रत्नमालाको कुछ भी समय न लगा । उसने उसे तुरत पहचान लिया कि यह मल्लाह देनेवाली युवती समन्तभद्रके महलके पुत्र सुभद्रकी पत्नी मणिमालिनी है । पाठकोंको यह स्मरण होगा और हम भी यह बात पहले लिख आये हैं कि समन्तभद्रके तीन पुत्र हैं । उनमें सबसे बड़ेका नाम रत्नभद्र महलकेका सुभद्र और छोटेका मणिभद्र है । वही मणिभद्र हमारे इस-उपन्यासका मुख्य पात्र है । इस कारण इसके विशेष परिचय कराने की यहाँ ज़रूरत नहीं । समन्तभद्रके महलके पुत्र सुभद्रकी रीका नाम मणिमालिनी है । वही इस समय रत्नमालाके साथ बात-चात कर रही थी ।

रत्नमालाको समन्तभद्रको घरमें आये अभी सिर्फ एक-दो दिन ही हुए हैं। परन्तु इतने थोड़े समयमें ही रत्नमालाने देखा कि मणि-मालिनी उसे हृदयसे प्यार करती है और एक वहिनकी भाँति हर तरह उसकी सार-सँभाल रखती है। मणिमालिनीकी ऊपर कहीं गई बातें सुन कर पुनश्च रत्नमालाकी आँखोंमें पवित्र आँसुओंकी धारा बह चली। उसने उनका नाम भी जपा, उनमें गद्गद होकर मणिमालिनीने कहा -

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22	23	24	25	26	27	28	29	30	31	32	33	34	35	36	37	38	39	40	41	42	43	44	45	46	47	48	49	50	51	52	53	54	55	56	57	58	59	60	61	62	63	64	65	66	67	68	69	70	71	72	73	74	75	76	77	78	79	80	81	82	83	84	85	86	87	88	89	90	91	92	93	94	95	96	97	98	99	100
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22	23	24	25	26	27	28	29	30	31	32	33	34	35	36	37	38	39	40	41	42	43	44	45	46	47	48	49	50	51	52	53	54	55	56	57	58	59	60	61	62	63	64	65	66	67	68	69	70	71	72	73	74	75	76	77	78	79	80	81	82	83	84	85	86	87	88	89	90	91	92	93	94	95	96	97	98	99	100

मणिमद्र

करती है उसी मौनि नाना अटंकारोंमें सजी और गज-गनिमें एक उधर लचकती एक पोइशी युवती मन्द मन्द मुसक्याती हुई उसी ओर आ रही है। इस आगता नई युवतीने अपना एक हाथ सुन्दरीके कपड़े पर फिर रक्खा और दूसरे हाथसे उसे अपने हृदयमें दबा कर बड़ी मधुरताके साथ कहा—

“ बहिन तुम्हारे मादर, पैर और उद्योगकी जितनी प्रशंसा की जाय उतनी ही थोड़ी है। बहिन रत्नमाता, मैं सच कहती हूँ कि तुम्हारे बिना और किसीसे ऐसा जोखम भरा कार्य नहीं हो सकता था। अपने घरमें अपने ही माता-पिता द्वारा कैद किया गया कैदी सड़जोंमें छुटकारा पा जाय और बड़ भां तुम जैसी निरी अम्हके हाथोंसे, इसकी तो कोई शायद ही कल्पना कर सके। रत्नमाता, घरानेकी कोई बात नहीं है—मैंने जो ये सब बातें आँखोंसे देखली हैं, उनके लिए डरनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं चाहती तो तुम्हें रोक भी सकती थी; परन्तु मैंने ऐसा नहीं किया; और चुपचाप सब कुछ मैं देख-ने रही। मैं क्यों तेरे इस कार्यमें नहीं पड़ी, और क्यों नहीं मैंने इसमें विघ्न डाला, इन सब बातोंको विस्तारके साथ कहनेका यह उपयुक्त समय नहीं है। इस समय यहाँ पर खड़े रह करान चीत करना भी योग्य नहीं है। कारण घरके लोगोंके जग उठनेका समय हो गया है। इसको कोई इस जगह देख लेगा तो हमारी बड़ी बुरी दशा होगी। इस कारण चलो हम यहाँसे कुछ दूरी पर चली चले। इसके लिए हमें बड़ी सावधानी रखनी चाहिए कि हमारे कार्यकी किसीको स्लीमर भी खबर न पड़े। इसके सिवा अधिक बोलें इस जगह नहीं हो सकती। ”

सुन्दरी

इस दूसरी युवतीको पहचाननेमें रत्नमालाको कुछ भी समय न लगा। उसने उसे तुरत पहचान लिया कि यह सलाह देनेवाली युवती समन्तभद्रके मतले पुत्र सुभद्रकी पत्नी मणिमालिनी है। पाठकों-को यह स्मरण होगा और हम भी यह बात पहले लिख आये हैं कि समन्तभद्रके तीन पुत्र हैं। उनमें सबसे बड़ेका नाम रत्नभद्र मतलेका सुभद्र और छोटेका मणिभद्र है। यही मणिभद्र हमारे इस-उपन्यासका मुख्य पात्र है। इस कारण इसके विशेष परिचय कराने को यहाँ जरूरत नहीं। समन्तभद्रके मतले पुत्र सुभद्रकी स्त्रीका नाम मणिमालिनी है। यही इस समय रत्नमालाके साथ बात-चांत कर रही थी।

रत्नमालाको समन्तभद्रके घरमें आये अभी सिर्फ एक-दो दिन ही हुए हैं। परन्तु इतने छोड़े समयमें ही रत्नमालाने देखा कि मणिमालिनी उसे दृश्यसे प्यार करती है और एक बहिनकी भाँति हर तरह उसकी सार-सँभाल रखती है। मणिमालिनीकी ऊपर कहीं गई बातें सुन कर कृतज्ञतासे रत्नमालाकी आँखोंसे पवित्र आँसुओंकी धारा बह चली। आगेगने उसका गला भर आया, उसने गद्गद् होकर मणिमालिनीसे कहा—

“बहिन हमी क्यों। मैं चाहती थी कि अपना यह गुन कार्य किसीको न जानने दूँगी, पर जान पड़ता है कि देवी मणि क्यों दुःखी हो प्रकाश हो रही है। क्यों बहिन, मेरे सपन-सूत्रने चले। क्यों क्यों दुःखी हो रही है। यह सब-कुछ हम सुने मनसे दार्शनिकों काप दार-प्रायः का नयेन के सुन्दरी के न अविधानिनी बन बा

श्री क. रामायण पर वि प्रमाण आश्रित के लिए किया। उस समय
 १०६ अक्षर के 'द्वय' के अक्षरों के प्रकाश में ही रहो दो
 १०६ '१' के अक्षरों के प्रकाश में रहो। इनके
 १०६ '१' के अक्षरों के प्रकाश में रहो। इनके

पुर-प्रवेश

[illegible]

मणिभद्र

रभी धैर्य नहीं करनेका । " हमने जाना प्रकाश के तर्क-वितर्क का क्या होता; परन्तु उसे किसी तरह समझ करनेका कोई कारण न दिखा दिया । अन्तमें हमने उसके सब लोगोंको बुलाया था । हमने पूछा कि जिसने नीला साया पेड़ों पर दड़ी कटती थी; परन्तु किसीके द्वारा उसे सम्मोह-जनक उत्तर न मिला; इतना ही नहीं; किन्तु किसीके कहनेमें इतनी भी उसे निश्चिन्ता न दिखाई दी जिसमें उस पर सम्मोह तक भी किया जाता । सरके मुँह पर स्पष्ट भाव दिखाई पड़ रहा था कि मणिमन्त्रके भाग जानेसे वे सब एक ही तरीके आश्चर्यमें डूब रहे हैं । अन्तमें निराशा होकर समस्तमन्त्रों उन सबको दिखा कर दिया ।

[illegible]

मनुष्य-समाजमें भी यदि कोई ऐसा ही नियम होता कि ठाकुरी मनुष्यके प्रति भक्ति-भाव ही रखना दीनोंके प्रति दया ही करना और तदस्य पुरुषोंके प्रति उदसीनता करना, अर्थात् राग-द्वेषके कारणोंके न होने पर राग-द्वेष न किये जाते तो इस संसारमें जो दिन प्रतिदिन नये नये विचित्र दृश्य हमारे देखनेमें आते हैं उन्हें हम न देख सकते । कोई यह पूटना चाहे कि महावीर प्रभुने समन्तमद्र को ऐसा क्या बिगाड़ा था कि जिसके कारण उसे प्रभुके साथ शोध या शत्रुता करनी पड़ी, तो इसका उत्तर हम ऊपर दे चुके हैं; और वह यही कि संसार गणित शास्त्र नहीं है । हम यह कहनेका साहस नहीं कर सकते कि ऐसा हो तब ही ऐसा होगा । पूर्वमर और जन्म-जन्मान्तरके कारणोंका पूर्यकरण करके संसारको गणित-शास्त्र सदृश सिद्ध कर देना हमारा काम नहीं है । हमारी समझमें तो एकटिन प्रश्नको त्रिकालदशो-सर्वज्ञके लिए ही छोड़ देना अच्छा है ।

बूढ़ा समन्तमद्र बिछीने परमे उठना ही चाहता था कि इतने मणिमद्रके माग जानेके समाचार उसके कानों तक पहुँच गये । उसने सुन कर अभिमानी बूढ़े समन्तमद्रका गिल एकदम बहक उठा । सिरसे पाँव तक जोरकी गमाठा प्रदीप्त हो उठा । उसकी आँखों में आगकी चिनगारियाँ निकलने लगीं । उसने कहा—“मणिमद्र नाछे बन्द था, उसे निकाल कर मिमने मगा दिया ।” मेरे ऐसे बड़े घर में ऐसा विधामशली-पानी-असमनुष्य के मिमने अपने प्राणोंव को छोड़ कर वेगा प्रयत्न माइम किया । जबतक मैं उस दुष्टवत्ता लगा कर उसे उचिन मजा न दे दूँगा तब तक मेरे हृदय

दूसरी एक बूढ़ी लीने कहा कि "हाँ, हाँ, इसमें नई बातें नहीं हैं। मणिमद दीखनेमें तो एक लड़का-मा जान पड़ता है, पर वह किसी कचे गुरुका चेला नहीं है। न जाने उसने कितने पुस्तकें पढ़ डाली हैं और न जाने कितने मंत्र-मंत्र साथ लिए हैं। तुम नहीं देखने थे कि वह दिन मर घाही में बैठा रहता था। ई-लाग तो इस परसे यह सोचने थे कि बेचारेकी माँ हाल ही मरी है। इस कारण उसे बड़ा दुःख होता होगा। पर यह सब तो उमर बढ़ानेवाली थी। रुच बात तो यह है कि वह सारे दिन देवी-देवताओं की साधना ही किया करता था। उसको ही यदि देवी-देवता सहायता न देंगे तो किमकी देने।"

तीसरे एक डेढ़ अग्नठने कहा— "यह ठीक है, पर मैं तो इन बातोंको नहीं मान सकता कि मणिमदको कोई मरानके बाहर ले गया। तुम मानो या न मानो, पर मैं कहे देता हूँ कि मणिमद दूसरी जगह नहीं गया है; किन्तु वह जो मंत्र-मंत्र जानता था उसके बलसे उस कोठड़ीकी दीवालमें ही समा बैठा है। यह हम लोगोंके देख सकता है, पर हम उसे नहीं देख सकते।"

धीरे धीरे ये मय बाने सम्मभद्रके कानों तक पहुँच गई। वह साधारण मनुष्योंके जेना कानोंका कथा नहीं था। उसने निश्चय कर लिया था कि लोग मणिमदके सम्बन्धमें चाहे जो कुछ कहें, पर इतना तो मय है कि वह मेरे नाक-चाकर या चाके ओगोरी सहायताके बिना कभी बूट नहीं सकता। मुझे तो उम्मीद बाने जानने की आवश्यकता है कि अपने जी को जो बममें डाल कर यह मादस

पुर प्रवेश

कर इन्हें भी बड़ा ही कष्ट हुआ। जिसके यहाँ ये पावने हो रहे हैं उसके यहाँ एकाएक इस प्रकार दारुण शोक छाया हुआ देख कर इनका चित्त भी अस्थिर हो उठा। इसके भैया रत्नमाछने यह भी सुना कि “यह जो सुन्दर छड़की आकर रही है, वह बड़े ही चालाक जान पड़ती है, वही इसीने तो मणिमन्त्रको न मना दिया हो!” एक दासीके मुँहसे अचानक इन शब्दोंको सुन कर रत्नमाछाको जान पड़ा कि छोगोंका मुँह पर बहम है और उनका वह बहम बढ़ता ही जाता है। उसने सोचा कि ऐसी स्थितिमें यहाँ रहना उचित नहीं। एकान्तमें उसने इस बात पर बड़ा निश्चय किया। इतने बड़े घरमें उसका सच्चा स्नेही मणिमाछिनीको छोड़ कर और कोई नहीं था। इस कारण उसने उसीके पास जाकर सलाह लेना उचित समझा। एकबार उसकी इच्छा समस्तमन्त्रों घरसे माग जानेकी भी हुई; परन्तु कई अनिवार्य कारणोंके कारण उसे अपनी यह इच्छा मनकी मनमें दबा देनी पड़ी। घरके सारे लोग रत्नमाछाको ही सन्देहकी निगाहने देख रहे थे।

अन्तमें बड़ी चतुर्गई और कठिनाईमें रत्नमाछा मणिमाछिनीके जाकर मिट्टी और मसालोंमें उमन अपनी मार्ग दिखा उसे कइ सुनारों। रत्नमाछाका ऐसी चेहरा। जिसमें देख कर मणिमाछिनी भी घबरा उठी। उमने वह कठिनाईमें रत्नमाछाका चेहरा देकर हिम्मत बैचने और मन्त्रमन्त्र कहने। उनके माँ उमने रत्नमाछाके यह भी कहा कि चेहरा, देख, और निम्न अब यहाँ मत आना। वह मन्त्र न मन्त्र है, और न मन्त्र आ जाऊँगी। उस समय निश्चित

परिचय

उत्तराश्वमेध पूर्णिमाका चन्द्रमा दोधा दे रहा है । सूर्य

चौदनीमें सारा मद्यण्ड खान कर रहा है । शीतल

मित्रा वायु नाना तरहके फूलोंकी सुगन्ध ग्रहण कर गड़ोंकी मि

त्रियों, दरवाजों और शरीरोंमें दोरु दिग्-दिग्न्तर्म फैलनेका

कर रहा है । गाढ़ निद्रानन्दमग्न नर-नारियोंने शक्तिमें कोई

न पहुँचे, इसके विष प्रकृति देवी भी आता कान चुम्बन

रिने जा रही है । दिन-भरके उद्वेग, भय, शोक, उन्मुक्तता

परिश्रमके कारण बड़ी हुई आगस्ती इस उन्माद-मित्रा चौद

मय देवी जान पहुँची है मानों उमने भ्याम्ना-जन्म खान

कर मरेद माफ़ी पहनकी है । इस समय कोई आगस्तीकी छी

बद कर चारों ओर देखे तो उसे आगस्ती मधुमय हाँक चौदनी

जान पहुँची । उसकी उस काल्प समारि और जोन-भाजनका

चिह्नमा है । इस समय माया जगत् निद्रा देवी

जगत् और मृगका पूरे जानन्द मोह रहा है

निद्रा-प्रदधनय काट दूध खान हाँक दे

जगत् और दूधन

जगत् के बेट न

जगत्

जगत्

जगत्

जगत्

जगत्

जगत्

परिचय

ऊँ काशमें शूर्जिमाका चन्द्रमा शोभा दे रहा है । सूर्य-देव
चौदनीमें सारा ब्रह्माण्ड स्नान कर रहा है । शीतल-देव

स्निग्ध वायु नाना तरहके फूलोंकी सुगन्ध मड़ण कर गृहोंकी छिड़
कियों, दरवाजों और झरोखोंमें होकर दिग्-दिगन्तमें फैलनेका दम
कर रहा है । गाढ़ निद्रा-नननन नर-नागियोंको शान्तिमें कोई बन्
न पहुँचे, इसके छिप् प्रकृति देवी भी अपना कान सुरचाप होख
रिमें जा रही है । दिन-भरके उद्वेग, भय, शोक, उन्मुक्तता और
परिश्रमके कारण बची हुई श्रावस्ती इस उन्मथल-स्निग्ध चौदनीमें
मन्य ऐसी जान पड़ती है मानो उसने व्यान्मन-जन्ममें स्नान कर
एक सफेद साड़ी पहनली है । इस समय कोई श्रावस्तीकी छतों पर
बढ़ कर चारों ओर देखे तो उसे श्रावस्ती सचमुच ही एक योमिनी-सी
जान पड़ेगी । उसकी उस शान्त समाधि और मौन-साधनका कुछ
टिकाना है ! इस मनन मारा जगत निद्रा-देवीको मगर मोदने
शान्ति और मुक्तका पूर्ण आनन्द भोग रहा है । दिनका जगद्वे
होर्वा-वैभवमय कोण्डाल स्नान हो गया है । ... तो ... जगत्मा,
मज्जन और दुःखन, ... और ... कोई नर
... का ...

...

...

...

परिचय

या आत्मका नामर्ननदान नहीं। अनेक और आत्मका के कारण
उसके हृदयमें गुप्त गुप्त मय रहा है। उसने उगुक्त नेत्रोंको देख
कर जान पड़ता है कि वह किसीके आनेकी बात बोल रही है;
परन्तु उसे कोई बच्चीसे आता हुआ दिखाई नहीं पड़ता। अब
पाठकगण, उसकी विचार-अभाविके मत पानेका हमें भी कोई अपि-
कार नहीं है। उसे इसी दशमें बैठे रहने दीजिए; और आरप, हम
इस बीचमें उसके गत-जीवन पर एक दृष्टि डालें।

रत्नमाता एक अच्छे धनी गृहस्थकी लड़का है। उसके पिताका
नाम वसुभूति है। वसुभूति कोशाम्बीका एक प्रधान व्यापारी और
समाजका नेता समझा जाता है। उसके रत्नमाताके सिरा और
कोई सन्तान नहीं है। रत्नमाताकी प्रेममयी जननी उसे बाल्यमें
ही छोड़ कर स्वर्ग सिधार गई है। वसुभूति का रत्नमाता पर प्राणोंसे
भी बढ़ कर प्यार है। कुछ सगे सम्बन्धियोंने वसुभूतिसे दूसरी बार
व्याह्र करनेके लिए बड़ा ही आग्रह किया; परन्तु उसने इस भयसे,
कि शायद सीतेकी माताके द्वारा रत्नमाताको दुःख उद्यम पड़े, फिर
व्याह्र करना उचित नहीं समझा। रत्नमाताको वसुभूतिने बड़े लाड़-
प्यारसे पाला है। वसुभूति अपनी प्यारी कन्याकी सारी आशा-इच्छा
और प्रायश्चित्त सदा पूर्ण करनेके लिए तैयार रहता है। शोक और
दुःखका आशय रत्नमाताके कोमल शरीरकी अब तक नहीं छू सका
है।

रत्नमाता एक सुन्दर लड़की है। उसकी उम्र लगभग
उन्नीस वर्ष है। उसकी उम्र और रूप दोनों ही अत्यन्त सुन्दर हैं।

मणिभइ

गम और प्राचीन ग्रन्थों द्वारा उसे बहुत कुछ नया-पुराना ज्ञान तथा मनन करनेको मिला था। जैन-साधुओंके पवित्र और प्रभावशाली उपदेशसे उसका हृदय भक्ति और धार्मिक भावोंसे बड़ा कोमल बन गया था। संसारके स्वरूप और मानव-जीवनकी सरलताके सम्बन्धमें उसने नाना तरहके उपदेशोंको सुना। उन्हें सुन कर वह बैठ न रही थी। उनके प्रभावमें उसके हृदयमें श्रेष्ठ नर-जन्म और श्रेष्ठ धर्मके सरल कानोंकी भावनाएँ दिन दिन बढ़ होती जाती थी।

1 नमाज़ाकी उम्र इस समय सोलह वर्षकी है, परन्तु उसका कोमल हृदय अभीसे समार-विरक्ति और मैत्री-भावनामें इतना अग्निकृत हो गया है कि वस्तुभूतिको उसके मविष्यत्के सम्बन्धमें अनेक बार चिन्ता करनी पड़ती है । एक बार स हस करके वस्तुभूतिने नमाज़ासे व्याह करनेका प्रस्ताव किया । उसने सन्तान-प्रेमके बल से उसे धन-दौड़त और मान-मर्यादाका बहुत कुछ लोभ दिया कर व्याहकें लिए बड़ा आग्रह किया, परन्तु नमाज़ाने किसी प्रकारके संकोच और अभिमानके बिना रिताको जवाब दिया कि “ रिताजी, आरक्षी आइयाको मानना मेरा सबसे पहला कर्तव्य है, परन्तु कौन जाने वह हृदय क्यों एक ऐसे आकर्षणके द्वारा विचकर अवश्य मार्ग पर जा रहा है कि जिसमें व्याह करके भोग विश्राममें जीन बिनाना न हो सक्ता नहीं । वह सब अनादि कारणों से भव-वनमें चक्कर खा रहा है, इस भव-व चक्कर में एक चक्कर यदि दिया-चम और आरक्षी इतक दिग्गजों का साथ न हो तो क्या कोई बुद्धिमान हीन हीन के बगैर भव-व चक्कर से बच न सके । पुनिक

परिचय

निर्दोष कण्ठसे वैराग्यकी आवाज सुन कर उत्तका स्तिर बून गया । यह बात हम देखें ही लिख आये हैं कि वसुभूतिके हृदय पुत्रिके प्रेम्मे अभिभूत हो रहा था—वह उत्तके लिए सब कुछ भूल गया था; और यही कारण है कि रत्नमाताजी बातोंको सुन कर आज उत्तकी यह दशा हो गई ।

वसुभूतिने सोचा कि इन्ने अब ब्याइके लिए कुछ कहना सुनना बर्बाद है । उत्तके कथे दृश्यमें वैराग्य-भावनाके जो संस्कार खूब बढ़ जाय चुके हैं उनके उबाड़ फैलानेका प्रयत्न किया जायगा तो उत्तसे इन्ने बहुत कष्ट पहुँचेगा । इसके लिए तो अब सबसे अच्छा यही उपाय है कि इन्ने और इनकी नानीको साथ लेकर कोई यात्रा की जाय । यात्रामें सत्तारकी ओर मोड़ देना करनेवाली नाना तरहकी सुन्दर सुन्दर भोग-विलासकी वस्तुओं और मनोहर दृश्योंकी शोभाको देख कर स्वयं प्रकृति ही इसके हृदयमें ब्याइकी प्रेरणा करेगी । क्योंकि कथे संस्कार इस जाति-किर्तुर्न संसारके समागममें आकर स्तिर अधिक समय तक नहीं दूर सकते । इन प्रकार स्तिर विचार करके वसुभूति अपनी माता और रत्नमाताजी लेकर तीर्थयात्राके लिए चल दिया । गस्तेमें अवकाश देखें ही यात्रा करने हुए वे लोग एक दिन एक स्थान आकर पहुँचें । वसुभूति और रत्नमाताजी दोनों एक-दूसरे के साथ-साथ चलते-चलते एक-दूसरे के हाथोंमें हाथोंमें आकर बैठ गये । वसुभूतिने रत्नमाताजीके हाथोंमें हाथोंमें आकर बैठ गये । वसुभूतिने रत्नमाताजीके हाथोंमें हाथोंमें आकर बैठ गये ।

गम और प्राचीन धर्मों द्वारा उसे बहुत कुछ नया-पुनरा करने तथा मनन करनेको मिला था। येन मा (श्री कृष्ण गीता और प्रभावशाली उपदेशोंसे उसका हृदय भक्ति और धार्मिक भावोंमें बड़ा होकर था गया था। संसारके व्यस्त और मानव-जीवनकी मरुतताके सम्मुख उसने नाना तरहके उपदेशोंमें सुना। उन्हें धुन कर वह बैठ कर रही थी। उनके प्रभावमें उसके हृदयमें धर्म ना-काम और श्रेष्ठ धर्मके सफल करनेकी भावनाये दिन दिन बढ़ जाती जाती थी।

एनमाडाका उम्र इस समय सोलह वर्षकी है, परन्तु उसका कोमल हृदय अभीसे समार-विरक्ति और मेघी-भावनामें इतना अन्विष्ट हो गया है कि वसुधैव कुटुम्बकम् के सिद्धान्तके सम्मुखसे अनेक बार चिन्ता करती पड़ती है। एक बार स इस प्रकार वसुधैव कुटुम्बकम् का प्रस्ताव किया। उसने सन्तान-प्रेमके बंधन से उसे धन-दौलत और मान-मर्यादाका बहुत कुछ छोड़ दिया। वह व्यापक और बड़ा आग्रह किया, परन्तु एनमाडा ने किसी प्रकारके संकोच और अभिमानके बिना पिताको जवाब दिया कि "पिताजी, आपके आकांक्षों को मानना मेरा सबसे पहला कर्तव्य है, परन्तु मैं जानती हूँ कि हृदय कभी एक वेले आकर्षणके द्वारा विचरकर अन्धकार मार्ग पर चला है कि जिसमें यह कह कर भोग विलासमें जीन विनाश हो सकता है। यह जीन अनादि का उम्र है, परन्तु मैं जानती हूँ कि यह अनादि चक्रोंमें एक चक्र यदि इन धर्म और आदर्शों के बिना उमर का दिया जाय तो क्या करेगा? बुद्धि ही है।" एनमाडा के चर्चोंके वसुधैव कुटुम्बकम् का यह नया सारांश।

परिचय

निर्दोष कण्ठसे चराम्यकी आवाज सुन कर उसका सिर घूम गया । यह बात हम पड़ले ही लिय आये हैं कि वसुभूतिका हृदय पुत्रिके प्रेमाने अभिभूत हो रहा था—वह उसके लिए सब कुछ भूल गया था; और यही कारण है कि रत्नमालाकी बातोंको सुन कर आज उसकी यह दशा हो गई ।

वसुभूतिने सोचा कि इसे अब व्याइके लिए कुछ कइना सुनना व्यर्थ है । उसके कचे हृदयमें वैराग्य-भावनाके जो संस्कार खूब दृढ़ जम चुके हैं उनके उबाड़ फेंकनेका प्रयत्न किया जायगा तो उससे इसे बहुत कष्ट पहुँचेगा । इसके लिए तो अब सबसे अच्छा यही उपाय है कि इमे और इसकी नानाको साथ लेकर कोई यात्रा की जाय । यात्रामें सतारकी ओर मोड़ पैदा करनेवाली नाना तरहकी सुन्दर सुन्दर भोग-वििलासकी वस्तुओं और मनोहर शइरोंकी शोभाको देख कर स्वयं प्रकृति ही इसके हृदयमें व्याइकी प्रेरणा करेगी । क्योंकि कचे संस्कार इस आसक्ति-पूर्ण संसारके समागममें आकर फिर अधिक समय तक नहीं टहर सकते । इस प्रकार स्थिर विचार करके वसुभूति अपनी सात और रत्नमालाको लेकर तीर्थ-यात्राके लिए चल दिया । रास्तेमें अनेक तपोंकी यात्रा करने हुए वे लोग एक दिन भ्रावस्ती आकर पहुँचे । वसुभूति और समन्तमद्रकी व्यागार-सम्बन्धने बहुत दिनोंकी मित्रता थी । समन्तमद्रकी वसुभूतिके भ्रावस्तीमें आनेकी खबर मिलने ही पर समन्तमद्र आकर उन्हें अपने घर पर लिये लाया और बड़े अदर-सत्कारके साथ उसने वसुभूतिके भ्राव-भगत की । वसुभूतिके भ्रावस्तीमें आने की खबर ही दो दिन हुए होगे कि

इतनेमें कौशाम्बीसे कोई ऐसे जल्दरी समाचार आये कि जिसमें उ
 आचार होकर उसी समय कौशाम्बी चला जाना पड़ा। वह अन्त
 सास तथा रत्नमाछासे यह कह कर, कि मैं बड़ीका काम पूरा
 बहुत शीघ्र आमाऊँगा, उन्हें वहीं छोड़ गया।

परन्तु आज हम देखने हैं कि रत्नमाछाको समस्तभद्रके सम्बन्ध
 कर एक क्षण-भर भी बिनाता एक भयकर युग जैसा मादूम दे
 है। रात्रिका प्रथम पहर बीत चुका और दूसरा पहर भी जात पड़
 है बहुत शीघ्र पूरा होना चाहता है। अब तक भी रत्नमाछा
 आँखोंमें निद्राकी सुमारी या आलसका चिह्न नहीं दिखाई पड़ता
 वह खिड़कीमें बैठ कर चन्द्रमाकी ओर एकटक लगाये देख रही
 और इस बातकी खोज कर रही है कि मुझे गभीर विचार-साधना
 बढ़ती हुईके लिए कहीं नाव या किनारेका ठिकाना है या नहीं
 बीच बीच चौक कर वह यह भी बड़ी उत्सुकताके साथ देख
 जाती है कि पीछेसे किसीके पाँवोंकी आवाज तो नहीं सुनाई पड़
 है। उसके शयन-गृहका दरवाजा आधा खुला हुआ था। उसने
 चौक कर पीछे दरवाजेकी ओर दूर तक नजर दौड़ा कर देखा
 परन्तु उसे कोई दिखाई न देनेके कारण वह फिर विचार-मग्न हो
 सोचने लगी कि अब तक मणिमाछिनी क्यों नहीं आई ? उसने
 बचन दिया था कि मैं रातको किसी न किसी तरह तुझसे अवगत
 मिटूँगी। तो क्या वह अपनी प्रतिज्ञाको भूल गई ? नहीं ऐसा न
 हो सकता। उसीने तो मुझे दरवाजा खुला रख कर बैठनेको कहा
 है। जान पड़ता है कोई भारी काम उस पर आ पड़ा होगा,

जिन बड़े मेरे पास नहीं जा सकती है । अस्तु, जरा देरमें आगेगी, पर आगे बिना यह कभी नहीं रह सकती । इस प्रकार रत्नमायाके हृदयका वेग ओं ओं प्रबल होता गया त्यों-त्यों रात्रि भी अधिक अधिक गंभीर और डरावनी-सी होती गई । इसनेमें किमोंके नायके होते-होते रत्नमायाके किशोड़ सुख गये । रत्नमायाने बड़ी उन्मुक्तताके साथ रत्नमायाकी ओर देखा । पर यह क्या ' यह नजिमायिनो तो नहीं मान सकती । यह तो कोई पुरुष दिखाई दे रहा है । रत्नमाया भय और उत्कण्ठित मनमें एकदम उठ बैठी और भयसे काँपती हुई रत्नमायामें उसने उन आनेवालेसे पूछा—“तुम कौन हो ? ”

अतन्तुक उसका कुछ उत्तर न देकर धीरे धीरे आगे बढ़ने लगा । उसकी इन कृत्याते रत्नमाया पड़ते तो बड़ा घबराई; पर जैसे ही वह पुरुष रत्नमायाके पास आकर खड़ा हुआ कि उसने हृदयके सब बलसे इकट्ठा काले बड़ी हिम्मतके साथ कहा कि — “सावधान ! बाद खना कि वहाँसे जो एक पैर भी आगे बढ़े तो तुम्हारे लिए अपने मानकी रक्षा करना कठिन हो जायगा ' तुम-सदृश कुद्वान् प्रजाओंसे ऐसे एकान्त-निर्बन्ध स्थानमें किसी अनिश्चित अनिदि-कल्पाके शपथ-मूढ़में घुसना क्या उचित है । जाओ, तुम्हें यदि अपने प्राण, अपनी कीर्ति और अपनी कुल-मर्यादा प्रिय है तो वहाँसे उखटे पैरों वाट जाओ । ”

रत्नमायाका इस प्रकार नेवत्वी और गवे-पूर्ण आवाज सुन कर वह कुछ क्षणमात्र के लिए चुनकर वहीं खड़ा रह गया । उसने आगे बढ़नेके प्रयत्न किए परन्तु स्व-मुग्ध मर्यादा

मौनि उससे एक पैर भी आगे न बढ़ा गया । उसे जान पड़ा कि उसका सारा शरीर शिथिल-सा हो गया है ।

रत्नमालाकी इस तीव्र भर्त्सनाको सुन कर भी वह न नो दई छोट ही गया और न कुछ बोला ही । उसकी यह गृष्टना देख कर रत्नमाला और अधिक क्रोधित होकर बोली—“तुम क्यों हो जवान क्यों नहीं देते ? यही पर खड़े रह कर बतलाओ कि यह किस लिए आये हो ?”

रत्नमालाकी गंभीर, तीव्र और बढ़ती हुई आवाज सुन कर उसने सोचा कि जो आस-पासके लोग जग उठेंगे तो देरी का अपभोर्त्ति-निन्दा-बुराई होगी । इससे वह बहुत ही घबराया उसे अपने दुष्ट आशय पर क्षण-भर के लिए पश्चात्ताप भी हुआ अन्तमें उसने बड़ी नम्रताके साथ धीरेसे कहा —“रत्नमाला क्षमा करो, मैं मणिमालिनीका स्वामी मुभद्र हूँ ।”

रत्नमालाने कहा—“तुम मणिमालिनीके स्वामी हो ! अच्छा ऐसी गंभीर रातमें मेरे एकांत शयन गृहमें तुम्हारे आनेका क्या कारण है ? क्या मणिमालिनीने तुमको भेजा है ?”

मुभद्रने इतने इतने कौपनी हुई आवाजसे कहा — “अच्छा समझ लो कि मणिमालिनीने ही मुझे यहाँ भेजा है ।”

रत्नमालाने मुभद्रकी आज्ञा पर मे उसको हृदयकी पाप-यासनाको समझ दिया । उसे इस बातके स्थिर का लेनेमें कुछ भी समय न लगा कि वह मणिमालिनीका प्रया नाम दे रहा है । शोभ रोप-छाया और निरन्कारमें उसका निरागरम हो उठा । हृदय बढ़कने लगा ।

मरी आवाजसे गर्जकर कहा—“ ओ कुण्डकलंक ! कामान्ध-गुरक ! इस जगह खड़ा रह कर मुझे और मेरे शयन-गृहको अपवित्र—कटि-कित न बना ! मैं तुझ जैसे खान-वृत्ति वाले नराधमोंके साथ अभिमान बोलना नहीं चाहती । इसलिए या तो तू स्वयं इस घरमें बाहर हो जा, नहीं तो मैं स्वयं तुझे धक्के दे निकाल बाहर करूँगी । वसु-भूतिकी कन्या यदि तुझ जैसे कामी दुराचारीको सजा देनेके लिए इतना बल अपनेमें न रखनी होती तो ऐसे भरे घरमें उसे एक पाँव भी बितानी कठिन पड़ जाती ! ”

गर्विणी—तेजस्विनी और मल्लचारिणी रत्नमालाकी आँखोंसे निकलती हुई अग्नि-आला-सदृश किरणोंके तेजको सुभद्र अधिक स्नयन तक न सह सका । सुभद्र रत्नमालाके कमरेमें प्रवेश करते स्नयन जिस काममय शरीरको लाया था, वह रत्नमालाकी क्रोधरूपी आँखोंमें जल कर झाक हो गया । वह वहाँसे पीछा छोटा और बहुत ही धीरे धीरे पैर उठा कर जाने लगा । यह देख कर रत्नमालाका क्रोध और गर्व कुछ शान्त हो गया । उसे कमरेके बाहर होते देख कर रत्नमाला बोली—“ सुभद्र, जरा रुके रहो, बाहर न जाओ । मैं समझती हूँ कि तुम अब पड़लेके सुभद्र नहीं रहे । इसी कारण मैं तुमसे कुछ अधिक बाल करना चाहती हूँ । अब मुझे तुम्हारे साथ वात-चीन करनेमें कोई भय नहीं है । मेरा विश्वास है कि पड़ले जो पारी सुभद्र आया था, वह अब घर चुका है और उसके बदले मैं स्वामिनी भाई मेरे सामने खड़ा हुआ है । क्या मुझे तुम एक बार ‘उनकी जगह दोग ’ ”

मणिभद्र

पहले सुभद्रकी भाव-मृत्यु हो जानेसे आज उसका सुभद्र नाम सँभ हो गया है ।

सुभद्रने रास्तेमें चलते चलते विचार किया—“इस बातको कैसे कह सकता है कि मनुष्यके आत्म-हितके दरावाजे कितने कार्योंमें मिलने पर निरव्य सुलभते होंगे ! मेरे लिए तो रत्नमाळका क्रोध ही एक महान् आशीर्वादरूप हो गया । अब मुझे विश्वास हुआ कि संसार केवळ मुझ-जैसे विषयोंके कीड़ोंसे ही बना हुआ नहीं है; कि रत्नमाळा जैसी कितनी ही देवियाँ भी वसुन्धरा माताकी गोदमें निराला करती हैं । सचमुच ही आज रत्नमाळाने ‘बहुला वसुंधरा’ का कदावतकी चरितार्थ कर दिया । अहा ! रत्नमाळाके उस समयके दिव्य तेज और प्रभावका क्या ठिकाना है कि जिसकी एक ही फटका खाकर मेरी सारी दुष्ट-वासनायें मरम हो गईं । क्या यह ब्रह्मचर्यका तेज होगा ! या हृदयकी जाग्रतमान पवित्रताका प्रकाश होगा ! या बात पहले मैं नहीं जानता था कि एक अवला छोटी भी मुझ जैसे दुर्दमनीय पुरुषको इस भाँति क्षण मात्रमें पराजित कर देगी । परन्तु जब मैंने देखा कि अपवित्रताका और धर्मके पास अधर्मका अन्तःकारमय राज्य क्षणभर भी नहीं टहर सकता । रत्नमाळाने आज मेरा उत्साह का दिया, और इस लिए आजमे यह मेरी गुरु हो गई । उसने बहुत ठीक कहा था कि मणिमाळनी जैसा पवित्र नागिका पति मुझ जैसा दुर्बुद्धि नहीं हो सकता । मणिमालिनीका अब तक मैंने जो कष्ट दिया उसके लिए अब पश्चात्ताप करनेमें कुछ लाभ नहीं । अब तो यही एक मात्र उपाय है कि आज मणिमाळिनीसे क्षमा माँगी जाय ।

मणिभद्र

जान पड़ता है कि तुम जैसी सती-साध्वीको कष्ट पहुँचा कर देने जो पाप किया है वह किसी तरह नष्ट नहीं हो सकता। इतने पर भी मैं तुमसे एकबार क्षमाकी भीख माँगता हूँ। जिस प्रकार रत्नमाळीने मेरे सब अपराधोंको दया कर क्षमा कर दिया उसी प्रकार आशा है तुम भी क्षमा प्रदान करोगी। मैं तुम्हारा अयोग्य पति हूँ और इस कारण एक अयोग्य व्याक्तिपर क्षमा कर अपने स्वामाधिक उद्धार हृदयका परिचय दो। मेरी यह अन्तिम प्रार्थना है। इसके सिवा दूसरी प्रार्थना करनेका न मुझे समय है और न उसके लिए मैं योग्य ही हूँ। अब जब मुझे जान पड़ेगा कि मैं तुम्हारा योग्य स्वामी बन सका हूँ—तुम्हारा योग्य सद्बर्षी बन सका हूँ और तुम्हारे पास बैठनेका, अधिकारी हो सका हूँ तब एकबार फिर तुम्हारे पवित्र दर्शन करूँगा। देवी, इस समय अधिक बात करनेसे मेरा अशान्तमन और अधिक अशान्त होगा, इस लिए आइया दो और मुझे भूँट जाओ। मैं तुम्हारा योग्य स्वामी न था और न अब हूँ। मैं विषय-वासुताका एक कण्डा था। विषयी मनुष्यका व्याह व्याह नहीं कहा जा सकता; किन्तु पाशविक-वृत्तिकेचौराचि करनेका एक राक्षसी साधन मात्र है। मैं इस समय तुमसे क्षमाकी प्रार्थनाक सिवा और कोई प्रार्थना नहीं कर सकता। सब क्षमा प्रदान करो तो मैं अपना गला चकई।

मातामहो की आज्ञा न नकार कर सका मैंने वह देना कर तुम्हारे चरणों में डाल दिया। मैं तुमसे क्षमा कर देनेका निवेदन है। इसके बाद मैंने तुम्हारे चरणों में एक बार नमस्कार किया। एकदम नीचे

रत्नमाला और मणिमालिनी

सुभद्रके चले जानेसे मणिमालिनीको बड़ा दुःख हुआ ।

निपण्ण हृदयसे रत्नमालाके पास पहुँची । उसे रत्नमाला मुँह दिखाना बहुत ही छत्रा-उनक जान पड़ा; परन्तु आखिर नौच मुँह किये वह उसके पास गई । उस समय उसकी आँखोंमें आँसु छटक आये थे । बड़ी कठिनताके साथ कौपती हुई आवाजसे उसने कुछ बोलनेका साहस किया । उसे जान पड़ा कि रत्नमालाके साथ अनुचित व्यवहार कर उसके पति सुभद्रने जो अपराध किया था, वह मानो उसने किया है और इसके लिए उसका हृदय भर आया बोलनेका यत्न करने पर भी उसके मुँहसे एक शब्द तक न निकल सका । यह देख कर रत्नमाला एक क्षण-भर के लिए स्तम्भ-सी हो गई । इसके बाद वह मन्द मुसम्भान दाग हृदयके सन्तोषको प्रकट करती हुई मणिमालिनीके पास जाकर उसका हाथ पकड़ आई और उसे अपनी शय्या पर बैठा कर उसने आँचलसे उसके आँसु पोंछ दिये । जब मणिमालिनीका मन कुछ स्वस्थ हुआ तब कोमलता रत्नमालाने उससे पूछा—“क्यों बहिन, किस लिए रोती हो ? कल रातको तो तुमने हो मेरी आशा की, और आज तुम्हीं रो रही हो ! यह देख कर मुझे बड़ा देव और आश्चर्य होता है । बतलाओ, तुम्हें रोती हुई देख कर फिर मैं कैसे धीरज रख सकती हूँ । तुमने :—”

वचनों दाग मुँह धीरज दिया था, उन्हें तुम भी तो स्मरण करो।”

रामालने बड़े प्रेमसे उसके आँसू पोंछ कर कहा—“बहिन, मैं
 मे-धोनेसे कुछ लाभ नहीं दे। मैं जो कहूँ उस पर विश्वास करो
 मैं हृदय निश्चय दे कि सुमन घर आये बिना न रहेंगे। जब कि
 पका स्वरूप जान चुके हैं, अपने किये कर्मों पर उन्हें अ-
 ध्याता है और इसके लिए वे प्रायश्चित्त भी करनेको तैयार हैं,
 पवित्र और ज्ञानी बन कर अवश्य तुम्हारे दर्शन करनेको आँगे।
 पूर्ण हृदय जब पवित्रताके मार्ग पर चलनेको आगे बढ़ता है तब
 सदा वेग बड़े जोर पर होता है। तुम्हारे प्रियके हृदयमें इस क-
 री वेग शुरू हुआ है वह जब तक कृतकार्य न हो सकेगा तब तक
 भद्रको न छोड़ेगा। इसके लिए घबराएँगे कोई आवश्यकता नहीं।
 मैं विश्वास दे कि तुम्हारे प्रिय घर पर आरेंगे और तुम्हें दर्शन दे-
 ताये करेंगे। यही नहीं, किन्तु लोकोके आँसू पोंछनेके लिए वे सि-
 षकारी बनेंगे। बहिन, प्यारको घबराहटमें पड़ कर हृदयको सं-
 रचना ठीक नहीं दे। देखो बहिन, मुझे अब ज्यादा बात-चीत करने
 समय नहीं है, इस कारण मुझे जो कुछ बातें तुमसे कहनी हैं
 सब मैं बड़े बेनी हूँ। बहिन, यदि मैं चाहता तो इससे पहले ही
 तुम्हारी भाग गई होती; परन्तु तुम्हें कुछ लाभ करने मुनासी हो, इस
 कारण इस तरह बात करना मुझे उचित नहीं जान पड़ा, और इसी
 लिए मैं अब तक इस कामे रुक गयी हूँ। जरा धाम देकर भी
 तुम्हेंको मुना।

रामाल ने इस भाँति सुन-सुनकर जोर-जोर से रोने लगे।
 वह मुन के भाँति राम के हृदय में बहुत ही गहरी प्रतीति पड़ी। यह

और कोमलतासे कहा—“इसी लिए तो मैं तुमसे बातें करनेकी बातक जगती रही। मैं सब हाल तुम्हें सुना देना चाहती हूँ। परन्तु एक बात है। वह यह कि ये सब बातें तुम किससे, यहाँ तक कि सुमनसे भी न कहनेकी प्रतिज्ञा करो तो मैं अपना सिडसिडा बगने चलाऊँ।” यह कह कर रत्नमाछाने मणिमाछिनीकी ओर देखा। उससे मणिमाछिनी बहुत शर्मन्दा हुई। उसके दोनों गाल लाल हो उठे। वह हाथ जोड़ कर गद्गद् कंठसे कुछ कहना चाहती कि ममाछा बीचहीमें बोळ उठी—“अच्छा, अच्छा, मैं समझ गई। अब तुम्हें बोलनेके लिए कष्ट उठानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। तुम यही बात कहना चाहती हो न कि एक बार त्रियोंकी खास बात पतिसे कह देनेके कारण मैं उसका फल भोग चुकी हूँ।” अच्छा तो सुनो—

“पहले यही बात सुनो कि मैंने ऐसा बड़ा साइस क्यों किया। क्योंकि जितनी प्रबल उत्कण्ठा तुम्हें इस बातके सुननेकी है उतनी ही मुझे उसके कहनेकी भी है। शायद तुमने सुना होगा कि पहले कई कारणोंसे मुझे व्याद करनेकी इच्छा बिना कुछ न थी। उस समय मेरे हृदयकी यही उच्चतम भावना थी कि जीवनपर्यन्त तुमका यह काम दीन दुखी और अनाथोंकी सेवा-शुश्रूषा करना। जिना होने मुझे बहुत कुछ सुमन या मानु मैंने उस पर कुछ धन न दिया। मैं अग्न ही विचारोंमें मग्न रही। मेरा यह हृदय जिनाका बहुत भुग लगा, परन्तु इसमें मुझे क्या। उनका हिस्सा क्या मैं अन्त के पागलोंका छोड़ देऊँ। यह विचार का मध्यम न करनेके लिए आदिमें अन्त पर्यन्त

दोनों भाई

पूछा—“ बड़े भैया, यह बात तो अब तक मुझे किसीने भी नहीं कही कि मेरे कारण तुम सबको बड़ी भारी बिडम्बना भोगनी पड़ी है और मेरे ही कारण पिताजी इतनी बुरी दुर्दशामें फँसे हैं। सचमुच भैया, मैं बहुत ही बे-समझ हूँ; पर तुमने मुझे इस दुःखपूर्ण घटनाके सनाचार क्यों नहीं दिये ?

अच्छा बड़े भैया, बतलाओ, ऐसा मैंने क्या अपराध किया है ! बतलाओ, मुझे जैसे कुपुत्रके किस दोषके कारण पिताजीको ऐसा संकट उठाना पड़ा ! बतलाओ, मेरे ऐसे किस दुष्कर्मके कारण पिताजी इतने कृश तथा शोकाकुल हुए ! जान पड़ता है इन सब बातोंको सुननेके लिए ही मैं अब तक जी रहा हूँ । ”

सुमद्रने कहा “ यह क्या मणिभद्र ! क्या तुझे इस बातको बिल्कुल खबर नहीं है कि अपने घर पर कोई एक महीनेसे जो सैकड़ों ब्राह्मण विद्वान् और धनी-मानी सज्जन रोज़ आ-आ कर प्राईवेट सलाह-सम्मति और योजना किया करते थे वह सब क्या तू यह नहीं जानता कि वहाँ दिनरात कितनी बातें-चाँते और कितनी कल्पनाएँ हुआ करती थीं ! और न तुझे इस बातके जाननेका कभी कृतश्च ही हुआ कि ये सब पंडित लोग किस लिए आते हैं, क्यों पीछे जाते हैं और क्या बातें करने हैं ! मणिभद्र, तेरी यह अज्ञानता देख कर सचमुच मुझे बड़ा अचंभा हो रहा है । इस बातको भी तुझे खबर न हुई कि घरमें क्या हो रहा है - अचंभे है । इस बातका इमें जो स्वामने भी खयाल न हुआ कि इन सब बातोंमें अज्ञान होगा । ”

सुमद्रजी बनें सुन कर न जाने कहाँ भाग निकले बिना-बुझ और

मणिभद्र

गंभीर बन गया। सुभद्रने मणिभद्रकी ओर देखा तो उसे इस स्न भी मणिभद्रकी स्पष्ट आँखोंमें निरूपयता दिखाई दी। मणिभद्र उसकी बातोंका क्या उत्तर देता है, इसके लिए वह अत्यन्त उत्सुक हो उठा।

मणिभद्रने पहलेकी ही माँति सुभद्रकी ओर चकित दृष्टिसे देकर कहा—“नहीं, बड़े भैया, मैं प्रतिज्ञा पूर्वक कहता हूँ कि उस समय इन बातोंकी ओर मेरा विस्कुट ही ध्यान न था। भैया, क्या क्या नहीं जानते हैं कि जिस दिनसे स्नेहमयी माँ हम अभागोंके छोड़ कर स्वर्ग सिंघार गई हैं उस दिनसे एक दिन भी मैंने धारा पग नहीं दिया है। जिस कमरेमें उस भयंकर काल रात्रिको मैंने स्नेहपूर्ण सज्जन नयनोंसे मेरी ओर देखते देखते पारिवर शरीर छोड़ा उसी दिनसे उसी कमरेमें बैठा बैठा मैं रो-रो कर अपने दिन पूरे किया करता था। न जाने एक दिन क्यों एकाएक मेरी इच्छा संव्य समय बाहर घूम खानेकी हुई। मैं किसीसे कुछ न कह मुन कर अकेले धासे निकटा। दरवाजेसे बाहर निकलते समय मैंने अपने धाके चूत्ते पर कुछ ब्रह्मग विद्वानों और गृहस्थोंको बड़ी धवराइटके बात-चीत करते हुए देखा था। पिताजी भी उनके बीचमें गाल पर हाथ डके बिन्द स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। उनके चिन्तापूर्ण मुँहसे ये-ना मेरा मनमें आया कि मैं पिताजीसे पूछ कर निश्चय करूँ कि क्या मैं यहाँ का रहूँ और ये सब लोग किस कारण इकट्ठे हुए हैं। मैंने सोचा कि मैं इसका कारण जानूँ, कि कैसे प्रणिष्ठित विद्वान् लोगोंने

मणिभद्र

एगा ।” इसके बाद धनंजय भी चुप हो रहे । धनदत्तकी यह सर्मा मुझे बहुत अच्छी जान पड़ी; परन्तु साथ ही इस बातके लिए मेरी बड़ी उत्कण्ठा बढ़ गई कि धनंजय सेठ मेरे सम्बन्धने क्या बातें कहना चाहते थे । मेरी इच्छा हुई कि मैं उनसे सब बातें पूछूँ; परन्तु उस समय मैंने कुछ पूछना उचित नहीं समझा । मैं यह सोच कर चुप रह गया, कि प्रभुका उपदेश समाप्त हुए बाद जो कुछ पूछना वह पूछूँगा । परन्तु उस दिन प्रभुका उपदेश इतना प्रभावशाली मधुर और तत्त्वपूर्ण हुआ कि उसे सुन कर मैं बाह्य जगत्की मुक्ति भूल गया । आत्माके साथ कर्मोंका बन्ध किस तरह होता है, प्राणियोंको संसारमें किस तरह कहीं-कहीं भ्रमण कराते हैं, इसकी बातोंका प्रभुने इतना अच्छा सुझासा स्वरूप कहा कि मैं तो दिव्य नृत्य ही बन गया—मैं कहीं हूँ, कौन हूँ और मुझे कहीं जाना । इन बातोंका मुझे कुछ भी भान न रहा । जब मेरी विचार-सर्मा भंग हुई तब मुझे जान पड़ा कि जेठवनके इतने बड़े सभा-मण्डप केवल मैं ही अकेला बैठा हुआ हूँ । वीरप्रभु उपदेश समाप्त कर अनेक शिष्योंके साथ वहाँसे कब और कहीं चले गये इस बातका मुझे कुछ ध्यान नहीं रहा । प्रभुके उपदेश समयकी वह गंभीर-मधुर कोमल ध्वनि तब भी मेरे कानोंमें गूँज रही थी । जब मैं अच्छी तरह सचेत हो गया तब मुझ एक बार अपने घावों की बातोंकी याद आई । उस समय जान कि जिस लिए बिना ही कारण मेरा हृदय काँप उठा । मेरी आँखों में आँसू आये । मैंने अस्पष्ट दृश्य दिखाई दिया कि अपने घर के मन्त्रालय में कोई बड़ी भारी विपत्ति आकर गिरी है । कई बार मैं

मणिभद्र

न रहते हुए भी ब्राह्मणोंके दशव और भयके कारण उन पर बड़ी विपत्ति-इत्यादि सब बातें कह रहा था तब उसकी आवाजें यह भी स्पष्ट जान पड़ता था कि वह स्वयं भी उन बातोंसे लज्जित हो रहा है। इसके बाद उसने, गत रातके घनमाछाके प्रति किये गये अपने दुराचारका सब हाल भी बिना किसी कपट भावके मणिभद्रके सुना दिया। अन्तमें उसने हृदयके साथ जो आत्म प्रतिज्ञा की वह भी मणिभद्र पर प्रकट कर दी। उसने कहा— "मेरा, मेने अपने भयंकर पापका प्रायश्चित्त करनेके लिए स्वीकार किया है कि वीरप्रभुकी शरण जाकर काम-क्रोधादिकी भावना आलाओंसे धधक रहे इस संसार-वनसे निकल भागनेके लिए, धर्म और संघकी सेवार्थ मैं अपने प्राणोंकी आहुति देकर आत्माको पवित्र करूँ।" यह कहते हुए सुन्दर का गला रुंध गया। आँखोंसे दूर दूर आँसुओंकी झड़ी लग गई। मणिभद्र भी अपने बड़े माईकी यह दशा देख अधिक देर शान्त न रह सका उसकी आँखोंमें भी आँसु भर आए। जिस समय ये दोनों माई इस प्रकार अश्रुजलसे हृदयकी मलिनताको धो रहे थे उस समय वहाँ ऐसी कोई अन्य व्यक्ति मौजूद न थी जो उन्हें धीरज बँधाती। उस समयकी प्रचंड अग्निर्व्यापी देख कर यह जान पड़ता था कि प्रकृति इन दोनों बन्धुओंके रोनेमें सुशब्द है। पक्षी-गण भी इस भयसे बड़े-शान्त हो बैठे हुए थे कि कहीं उनके चह-चहानेसे उस मधुर रोनेमें कोई विष न आ जाय। आस-गाम किमाँके भी आने-जानेकी आवाज सुनाई न पड़ती थी। प्रायः समयके दो-पहरके सूर्यकी प्रचंड गरमीके मोरे मनुष्य-पशु-पक्षी आदि कोई भी बाहर निकलनेकी हिम्मत

: ११ :

वि रो ध

उत्तम बूढ़े समन्तभद्रका सुखमय संसार धूलमें मिक गया है। जिस समन्तभद्रका घर सदा आनन्दित और स्वाभाविक गौरवसे उन दिखलाई पड़ता था, उसी घर पर आज विवाद और विपत्तिके घनघे बादल बैठे हैं। जिस समन्तभद्रने यज्ञ-रक्षण, बलिदान और ब्राह्मणोंकी स्वार्थ-रक्षाके लिए आज पर्यंत शक्तिसे बाहर धन किया था उसी पर शहरके बड़े बड़े विद्वान् और धनी-मानी ब्राह्मण आदि क्रोधका पहाड़ टाढ़ रहे हैं। इन लोगोंका इस बातको सुन कर गेरोम काँप उठा है कि समन्तभद्रके दो लड़कोंने जेतवनमें जाकर बौद्ध धर्मकी शरण ली है और इसके सिवा वैदिक धर्मके द्वेषी कौशाम्बे-निवासी ग्रावक वपुभूतिकी लड़कियाँ रत्नमाळा उन्हींके घरमें आकर रहती हैं; और वहाँ उसका बहुत आदरसत्कार किया जाता है। आखिर उन लोगोंने यह निश्चय किया कि यदि समन्तभद्र समाके बीचमें इस बातको स्वीकार करे कि वे अपने पुत्रोंके इस काम पर खेद प्रकाशित कर उन्हें त्याग दें और रत्नमाळाको घरसे निकाल दें, तो हम लोग उनके साथ सामाजिक तथा धार्मिक सम्बन्ध रखेंगे नहीं तो धनदत्तकी भौति उन्हें भी स्वधर्म-भ्रष्ट समझ कर सारे शहरमें ऐसी रौंड़ी पिटवा देनी चाहिए कि उनके साथ कोई किसी प्रकारका सम्बन्ध न रखे। इन सब बातोंको सुन कर समन्तभद्रका हृदय विदारण होने लगा। उन्हें ऐसी कभी कल्पना भी न हुई थी कि घर

कलकी सभामें समन्तभद्र अपने अयोग्य पुत्रोंका सशके लिए पति काग, और उन्हें अपने रिताकी सम्पत्तिमें से एक कौड़ी भी न मिले इतना ही नहीं, किन्तु उस समय समन्तभद्र और उसके कुटुम्ब लोग इस बातकी प्रतिज्ञा करेंगे कि वे सुभद्र और मणिभद्रके स कोई प्रकारका सम्बन्ध तक न रखेंगे । सारे शहरमें यह प्रकट न दिया गया कि इस सभाके समापनका आसन राजकुमार जेतहीं ग्रहण करेंगे । साथ ही उन लोगोंने यह रिपर किया कि इस सभ जो महावीर स्वामीके यहाँ ठहरनेसे श्रावस्तीके लोग दिनो दिन वैदिक धर्मका त्याग करते जाते हैं और अन्याय तथा अवैदिक व्यवहार बढ़ते जा रहे हैं इन बातोंके रोकनेके लिए मदवार और उनके शिष्य जबदस्ती श्रावस्तीके बाहर कर दिये जायें ।

समन्तभद्रके यहाँ जो जो बातें निश्चित हुईं उनका हाक धनदत्त सुभद्र और मणिभद्रके पास भी पहुँच गया । ब्राह्मणोंका यह विशेष देख कर वे लोग बहुत डरे । दोनों भाइयोंको इस बातकी बड़ी चिन्ता हुई कि पिताजीको इन बातोंसे कैसे बचाया जाय और इसके लिए वे बड़ी देर तक विचार भी करते रहे । सारी रात उनकी इसी बातके विचारमें बीत गई कि कलके दिन क्या करना चाहिए और यह विरोध कैसे शान्त होगा । प्रयत्न करने पर भी उन्हें शान्ति हो जानेका कोई मार्ग न मूस पड़ा ।

सबेर होते ही धनदत्त, सुभद्र और मणिभद्रके साथ बौद्धप्रभुके दर्शन करनेका जेतवनमें गये । दर्शन का चुकनेके बाद उन्होंने वे सब बातें भगवानसे कह सुनाई जो प्रभुके विरुद्ध सभा बुलाने और

ही शोभा हो गई। उस समय मरेछो और उत्की ओर दृष्टि देते यह जान पड़ता था कि उन स्वर्गीय सुन्दरियोंके ललाटेपरकी उज्ज्वल कान्तिसे प्रकाशित हुई पुष्प-पराग युक्त कमलोंकी सुन्दरताकी बरि कर रहे हैं।

ठीक समय पर आवस्तीके राजकुमार जेतासिंह अपने कुछ प्रधान राज कर्मचारियों और शहरके प्रतिष्ठित पुरुषोंके साथ समान्मण्डपमें अपने समन्तभदने अपने बड़े पुत्र रत्नभद्रका हाथ पकड़े हुए उदेल-रू हृदयसे उनका स्वागत किया। इस समय समन्तभद्रके मुँह पर विषादकी रेखा स्पष्ट दिखाई पड़ती थी। उसे उन्होंने कृत्रिम हँसी छिपा देना चाहा; परन्तु यह न छिप सका। उस हँसीमें भी उनके हृदयकी वह विषादपूर्ण कालिमा प्रकट हो रही थी। राजकुमारक सत्कार करते समय उनका हृदय बड़े जोरसे धड़क रहा था। अपने प्यारे पुत्रोंको सदाके लिए परित्याग करनेके कारण उनका हृदय टूट जा रहा था। उन्हें इस बातका स्वप्नमें भी खयाल न था कि इस नूरी अवस्थामें धर्मके लिए इतना बलिदान कष्ट सहन करना पड़ेगा। अपने पूर्व प्रभाव और अधिकार सत्ताका स्मरण कर उनकी आँखोंमें आँसु भर आये। लोगोंने उन आँसुओंको आनन्दाश्रु समझ समन्तभद्रका आदर किया। यह देख समन्तभदने भी आँसु पोंछ कर कृत्रिम हँसीसे उन लोगोंको खुश किया।

राजकुमार जीरे जीरे मिहद्वार खोल कर अपने कर्मचारियोंके साथ समामें आये। मिहद्वारकी दक्षिण बाजूकी विद्वन्मण्डलीके सिवा सब लोगोंने खड़े होकर राजकुमारका स्वागत किया। कुमारने भी बड़ी-

मणिमद्र

विष्णु आ-उपस्थित हुआ । सब लोग परस्परमें पूछने लगे कि यह सब क्या गड़बड़ है—यह क्या हो रहा है । इसके लिए बाइकी ओर उन्होंने दूर तरफ नज़र दौड़ा कर चारों ओर देखा; परन्तु उन्हें कुछ भी पता न लगा । धीरे धीरे सबको ज्ञान पड़ा कि वह कोडाईर पास-गाम आ रहा है । उसके शत्रु भी अब उन्हें कुछ कुछ स्पष्ट सुनाई पड़ने लगे । इतनेमें एक साथ हजारों भक्ति भरे कंठोंसे निकली हुई जय-महावीर स्वामी की जय !—जय, जैनशासनकी जय !—की विप्लवध्वनि उठी और सभाके लोगोंमें ज्ञान पड़ा कि वह उस विशाल जन-सागरमें दबा देना चाहती है । इस बातको कोई नहीं समझ सका कि यह क्या हुआ और अभी कौन आ गया । सभाका काम आगे बढ़ानेके लिए उन लोगोंका सब ध्यान निष्कृत गया । अन्तमें जब कुछ वृद्ध न चला तब उद्गम, विम्वय और क्रोधसे कँपने लगे त्रैलोक्यमें एक लम्बी साँस ली और ' हा देव ! ' कह कर विशाल वृद्ध अपने आसन पर बैठ गया ।

वसुधैव कुटुम्बकम्। रत्नमाला पर कितना प्यार करते थे। इस कारण उन्हें नि-
चूड़ी दशमे अचानक ऐसे भयंकर आघातमें अधिक कटका देने
स्वभाविक ही है। रत्नमालाकी नानीको भी इस समाचारसे बड़ी दुः-
खी हो गई। जबसे उसने यह समाचार सुन पाया है तबसे उसकी
आँखोंके आँसू अबतक बने नहीं हैं। चाँगे और इसी निधयकी को-
होने लगी कि रत्नमाला कहाँ थी, उसे किसने, कब, कहाँ देखा था
और वह कहाँ चली गई! पान्तु किसीको उसका सुनो-प-ज-क
समाचार ज्ञान नहीं हुआ। वहाँ पर जो रत्नमाला अपने बहुमूल्य
वस्त्राभूषणों और पुस्तकोंको छोड़ गई है उन्हें देख कर वसुधैवकु-
टुम्बक और भी अधिक बढ़ जाता है।

जिस समय ब्राह्मण-समाजकी यह विराट् सभा समाप्त हुई कै-
बाहसे आई हुई महिलायें समन्तभद्रके घासे अपने अपने घर जा-
लगी उस समय उनकी घोड़ा गाड़ी आदिके कारण चाँगे और दश
कोलाहल मच गया था। किसीकी गाड़ीका पता नहीं था। किसीके
सईस लोग कहाँ चले गये थे। किसीकी गाड़ीके बेलों या घोड़ोंका
पता नहीं था। किसीके नौकर-चाकरोंको बार-बार पुकारने पर भी
कुछ जवाब न मिलता था। अनुसंधानसे सबने यही निधय किया कि
रत्नमाला अपने लिए इस गढ़बढ़के मौकेको अच्छा समझ कर ही
समय चली है। उस समय समन्तभद्रके नौकर-चाकर और घाके
लोग समामें आये हुए जन-समाजके खाना करने तथा उनकी
जरूरतोंको पूरी करनेमें रुके हुए थे, इस कारण वे रत्नमालाकी कोई
खबर न ले सके। उस दिन बड़ी रात तक यह गढ़बढ़ (१०), (११)

साथ वह पत्र उन्हें पढ़नेको दिया। पत्रको पढ़ कर वसुभूतिकी अंशु भी आनन्दाश्रु भर आये। पत्रमें लिखा हुआ था कि—

“ प्रिय बन्धु,

अपने प्रिय मित्र वसुभूतिकी कन्या रत्नमाला कल आधी रात लगभग सुवर्णगुप्तकी पुत्रियोंके साथ मेरे यहाँ आ गई है। वह अपने बिना कुछ पूछे-ताछे क्यों आई, इसके लिए मेने उससे बहुत ही ताछ की, पान्तु सन्तोष-जनक उत्तर कुछ नहीं मिला। जान पड़ा कि विषयमें मुझसे कुछ कहना नहीं चाहती। उसकी इच्छा है कि जब तक उसके पिता कौशाम्बीसे न लौट आवेंगे तब तक वह मेरे ही घर रहेगी। वसुभूतिकी या आपकी पुत्रीको मैं अपनी ही पुत्री समझता हूँ, इस कारण उसके लिए किसी प्रकारकी चिन्ता नहीं करिष्या। कुछ दिन जेतक भगवानके ही पास था, इस कारण आपको जल्दीसे मैं समाचार न दे पाया था। आशा है इसके लिए आप मुझ क्षमा करेंगे। रत्नमाला चाहती है कि उसके नानाको भी आप यही भिजवा दें ना बहुत अच्छा है। इति।

विशेष यह है कि इसी पत्रके साथ एक त्र म्वयम् रत्नमालाने भी भेजा है, उसे संभाल कर सोम त्यजना श्रीमणिमालिकाके पास पहुँचा दीजिएगा।

आपका मेवक—

धनदत्त ।”

पत्रको पढ़ कर वसुभूतिमें नानों नई चेतना-सी आ गई। उसने वेद-विज्ञान कुछ समझना ही अपनीमें दकाशिन हो उठा। वे फिर क्षयभार भी निम्ब न कर उसी समय अपनी प्रिय पुत्रीसे मिलनेको चले गये। इस समाचारमें मणिमदके चिन्ता-मंडित गम्भीर मुँह पर भी क्षण-भरके लिए उदास पूर्ण स्निग्ध हँसीकी चादनी खिल उठी।

बाद पिताजीने भी मेरे लिए कष्ट उठानेमें कोई बात उठाने लगे।
 पान्तु दुःख दे कि जन्मसे आज तक मेरे द्वारा कोई ऐसा कर्म
 नहीं हुआ जिससे पिताजी एक भ्रम-भरके लिये भी मुन्नी होने।
 बहिन, पिताजीके स्नेहकी तो मैं बा। ही क्या कहूँ; वे मेरे ही मि-
 -सुत्रे मान-वीन आजन्म दुःखिनी समझ कर—सदा चिन्तित और दुःख
 खा करते हैं। बहुत करके तुम्हें भी यह बात मालूम हो होगी। इसके
 सिवा मैं इतनी अभागिन हूँ कि जहाँ जहाँ जाती हूँ वहाँ वहाँ भित्ति
 मेरे पीछे ही पीछे दौड़ती रहती है। तुम स्वयं इस बातको सोच समझ
 हो कि जबसे मैं तुम्हारे घर आई हूँ तबसे तुम्हारे सुखमय संसार पर कितनी
 कितनी शिकायतों आरु गिरी हैं। मेरे कारण तुम्हारे कुटुम्बो में जो
 शिकायतों बढ़नी पड़ी हैं उन्हें याद करके मेरा हृदय काँप उठता है।

कहा कहगामिन्धु बीरप्रभुने स्वयं पधार कर तुम्हारे घरको प्रशिक्षित किया था। मुझे यह देख कर बहुत आनन्द हुआ कि उनके पवित्र पाशोंको धूँयेन तुम्हारा घर पवित्र हो गया और उसकी सब विरदियों निश्चय हो गई। इस समय संभव है, तुम्हारे मनमें यह प्रश्न पड़े कि अब यहाँ इतना आनन्द था तब कि ऐसे समय में क्यों तुम्हारे घरको छोड़ कर यहाँ चला आई ? क्यों मैं उस समय यहाँ कटोरा बन गई ? कहिये, यहाँ बाल समझानेके लिए मैंने वह प्रश्न किया है। जल्द कहिये, श्राव कीचमें मनमें यह भी भावना हो सकती है कि इन सब बातों का मुझपर क्या फल हो गया है। मैं जल्द कह दूँ कि मैं बहुत समय है। इन सब बातों का मैंने बहुत ही अच्छे से विचार किया है।

मणिभद्रके साथ व्याह कर देनेके लिए कह चुकी हूँ तब इस तरह इधर-उधर मागते फिरते रहनेका क्या कारण है ! इसके उत्तरमें मेरा इतना ही मात्र निवेदन है कि आखिर मैं लौ हूँ और इस बातको अच्छे तरह जानती हूँ कि मेरा हृदय कितना दुर्बल है और कहाँ तक उसके दुर्बल होनेकी सीमा है। मैंने उस दिन यह कहा था सही कि मैं मणिभद्रके साथ व्याह कर लूंगी; परन्तु साथ ही यह भी कहा था कि इससे पिताजीका मन प्रसन्न हो, तो मुझे कुछ इन्कार नहीं है। और वदम ही इस बातको भूली होगी। परन्तु जब मैंने इस विषय पर बड़ा गहरा विचार किया तब मुझे जान पड़ा कि व्याह करना अच्छा नहीं है। यही कारण है कि मैं अपने सक्ल्यको छोड़ कर यात्रा पर निकलने पर आ गई हूँ। वह सक्ल्य यही है कि इस जीवनमें मैं कभी व्याह न करूँगी। मैंने अपने जीवनका यह उद्देश्य सिद्ध किया है कि विन-दोषा लेकर मैं धर्मका अनुशीलन और परहित-सेवा-व्रतका सब हृदयसे पाठन कर जीवन बिताऊँगी। मैं जानती हूँ कि पिताजी मेरी इन प्रतिज्ञाओं सुन कर बहुत दुःखी होंगे; परन्तु इसके लिए मैं अपने जीवनके उच्च उद्देश्यको पाँव तले रोदना नहीं चाहती। इस बातका विचार करके मैं खौप उठती हूँ कि मेरे इस निधयसे पिताजीका जीवन अकम्पत कष्ट-मय बन जायगा, परन्तु आचार हूँ। जान पड़ता है मायमें कुछ और ही कहा है।

कहिन, मेरा श्रम-मर भी ऐसा समय नहीं बीतता जो हृदयमें रिक्त हो ; दुःखका विचार कष्ट न देना हो। मैं यह जानती हूँ कि पिताजी का मुँह पर अकम्पत हो स्नेह है और मेरे इस निष्ठुर व्यवहारके

मणिमन्त्र

कभी नहीं चुका सकती। इस कारण तुम जैसी पवित्र हृदयकी स्त्री से ही जो मैं अपने हृदयकी सब बातें खोल कर न कहूँ तो त्रि कहूँगी ही किससे। और फिर ऐसा करनेसे मेरा जीवन मेरे लिए कितना दुःखरूप हो जायगा, इसकी तो मैं कहना ही नहीं कर सकती। मेरा विश्वास है कि अपनी सच्ची मैत्रिणीसे कोई बातका छिपाना महान् पाप है।

बहिन, मुझे जो खास बातें कहना थीं उन्हें मैं निवेदन का चुकी हूँ। अब एक बात और बार्की है; और यह यह कि मैं बड़ी प्रसन्नतासे पहुँच गई हूँ और सब आनन्दमें हूँ। श्रीगुरु सेठ सुवर्णगुरु की कन्या नर्मदाके साथ मेरा पड़लेका ही परिचय था, इस कारण कुछ दिन तुम्हारे घर पर अनायास ही हम दोनों का निवास हो गया। उससे हमें बहुत आनन्द हुआ। मैं नर्मदाके साथ ही पाठशाला में बैठ कर यहाँ चली आई हूँ। नर्मदा बहुत बुद्धिमती है। वह मुझे बहुत प्यार काती है। हृदयसे चाहती हूँ कि शासनाधीन उसका, तुम्हारा और जीव-मात्रका कल्याण करें।

तुम्हारे स्नेहकी भिलाविणी—

दुःखिनी रत्नमाला "

मणिभद्र

इतनी चकित हो गई; तो इस पर यह कहना है कि जिन्हें इस पर
सूरी समझनेकी अत्यन्त आवश्यकता हो, उन्हें मणिमालिनीके जैसी
और सहृदयता प्राप्त करनी चाहिए। कारण हृदयकी भावको हृदय
स्पर्श कर सकता है— दयार्थी समझ सकता है। गनमालार्थी भावना
को समझनेके लिए केवल बुद्धिसे ही काम नहीं चल सकता। उसके
स्नेह और सहृदयतासे पिघलनेवाले अन्तःकरणकी भी आवश्यकता है।

इस प्रकार विचार और चिन्तामें मणिमाष्टिनीका बहुत समय गया। अन्तमें जब वह विचार-निदासे जागी तब उसके शोक-मर्म मुख पर, घोर अँधेरी रातमें चमकी हुई बिजलीकी भाँति उमंग-विह्वलीका प्रकाश दिखाई दिया। उसके मुँहमें अनायास ही निकल गया कि रत्नमाष्टा, कोई चिन्ताकी बात नहीं है। जब कि तू अनायास ही पकड़ा चुकी है तब मैं भी तुझे किसी तरह नहीं छोड़ सकती। यह नहीं जान पड़ता कि इस प्रकार बोल उठनेमें मणिमाष्टिनीकी क्या मनःकामना है—वह क्या कहना चाहती है।

अन्तु, थोड़ी देर बाद उसे कुछ और बात याद आ गई। उस
उम्र पत्रको उठा कर अपने ओंखलसे बांध दिया। इसके बाद उसने
एक लंबी सीमा लेकर मन-ई-मन कहा-प्राणनाथ, क्या करूँ, तुम
इस समय मेरे पास नहीं हो। यदि मुझ्हाग याद भी मुझे बल हो-
आया होता, तो मैं कुछ करके बनता, परन्तु अब उस कहने
कुछ काम नहीं है। मैं जानूँ, कि या कोई चिन्ता-का बात नहीं है।
मैं सोच रहा हूँ कि मैं क्या करना न उठने दूँगी। इतना कहते
कहते मैं हीरा की दुकान पर आया। आखिरी आँखें बंद निकले।
मैं सोच रहा हूँ कि मैं क्या करना न उठने दूँगी। इतना कहते
कहते मैं हीरा की दुकान पर आया। आखिरी आँखें बंद निकले।

पास गये । उस समय भगवान् अपने पवित्र-चरिते शिष्योंके दृष्टि-
विराजे हुए थे । वही पर मणिमद भी एक मुनिके पास बैठा हुआ
हृदयमें प्रभुके पवित्र जीवनकी स्तुति कर रहा था । आगत दंतौ-
धनिक प्रभुके चरणोंमें नमस्कार कर अपने योग्य स्थान पर बैठ गये ।
इसके थोड़ी देर बाद प्रभु कहीं अन्यत्र जानेके लिए तैयार हुए । पर
देख कर धनदत्तने प्रभुसे कुछ प्रार्थना करना चाहा । प्रभु अपने
स्निग्ध-उज्ज्वल-मुधा-सम दृष्टिसे अपने एक शिष्यकी ओर निहार कर
वहाँसे चले गये । प्रभुकी इस दृष्टिमें क्या गर्भित अर्थ था उसे धनदत्त
उसी समय समझ गये ।

[illegible]

पास गये। उस समय भगवान अपने पवित्र-चरिते शिष्योंके पन
धियाजे हुए थे। बड़ी पर मणिमद्र भी एक मुनिके पास बैठा इध
हृदयमें प्रभुके पवित्र जीवनकी स्तुति कर रहा था। आगत संन्य
धनिक प्रभुके चरणोंमें नमस्कार कर अपने योग्य स्थान पर बैठ गये।
इसके थोड़ी देर बाद प्रभु कहीं अन्यत्र जानेके लिए तैयार हुए। पर
देख कर धनदत्तने प्रभुसे कुछ प्रार्थना करना चाहा। प्रभु बड़ी
स्निग्ध-उज्ज्वल-मुधा-सम दृष्टिसे अपने एक शिष्यकी ओर निहार कर
बड़ीसे चले गये। प्रभुकी इस दृष्टिमें क्या गंभीर अर्थ था उसे धनदत्त
उसी समय समझ गये।

अब यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि भगवानने मणिमद्रसे
आत्म-चिकित्सा करनेका भार इस अर्ध-पूर्ण दृष्टि द्वारा अपने एक शिष्य
पर डाला था। भगवानने इतने दिनोंके-आवाग-स्वभाव-विचार आदि
द्वारा मणिमद्रकी अन्तर्गत कसौटी पर कस डिया था। अन्तर्गत
इन छोगोंके साधने मणिमद्रकी चुनक कर उन मुनिने अत्यन्त कोप
और मनुष्यांग कदा — 'यम मणिमद्र, जबो तूमें यहाँ आये हैं
तर्मासे मैं तुम्हारे आत्माकी चिकित्सा करता चला आ रहा हूँ। तुम्हें
अब इसमें जरा भी मन्दिर नहीं रह गया है कि तुम्हारा अन्तर्गत
ही उज्ज्वल और उच्च कृतवर्गों विचलेगा। यदि तूमें इस सत्य
दीक्षा लेकर प्रभुके शासनकी सेवा करने लगा तो तुम्हारे द्वारा अन्त
और संसारका बहुत हा कल्याण हो; परन्तु यह जान कर तुम्हें का
होगा कि अब तक तुम्हारी दीक्षा का समय नहीं आया है। जब तक
तुम्हारी काष्ठ-छन्वि न आयगी तब तक तुम्हें संसारमें रह कर उन्नत

चेरचित हो उठी थी—जो अपनेको न सँभाल सकी थी—वह दुर्बल
हृदयकी स्त्री ऐसे पुरुषके साथ चिर समय तक एकान्त सद्व्यसने रह
कर क्या अपने संकल्पको सुरक्षित रख सकेगी, कभी नहीं। यह निस्संदेह
है कि ऐसे संयोगोंमें, जो हृदयको दुर्बल बनानेवाले हैं, कभी सफलता
नहीं हो सकती। इन सब बातोंको सोच-विचार करके रत्नमालाने
स्तिर किया कि इसी तरह जो दो-चार वर्ष और बीत जायें तो फिर
मैं स्वाधीन हो जाऊँगी और फिर मुझे कोई बातकी चिन्ता न रह
जायगी। और इसके बाद दोन्ना लेकर अपने संकल्पको साधनामें भी
कोई प्रकारकी विघ्न-बाधा उपस्थित न होगी; परन्तु उसका यह संकल्प
जब न हो सका।

एक दिन बड़ी घबराहटके साथ वसुभूतिने रत्नमालासे कहा—बेटी,
मेरी एक प्रार्थना तुझे स्वीकार करनी ही पड़ेगी। उसे बिना स्वीकार
किये तो धुटकाया नहीं है। और इतने पर भी यदि तू मेरी प्रार्थना
स्वीकार न करेगी तो समझ तू अपने बड़े पिताको सदाके लिए खो
देगी। यदि तू व्याह्र न करेगी तो मैंने अपने लिए दो ही मार्ग
स्तिर किये हैं। सो या तो मैं आत्म-घात करके मर भिड़ूँगा या घा-
वर छोड़ कर जंगल जंगल भटकते-फिरते जावन समाप्त कर दूँगा।
पिताजीक इन दुःख भरे उद्गारोंको पितृ-भक्त रत्नमाला न सह सकी।
वत्सका हृदय रीत उठा। उसे इस बातका कभी विचार भी न आया
था कि उसके लिए पिताजीको इतना भारी कष्ट सहना पड़ेगा।
वसुभूतिके शब्दों और उनमेंसे निकलते हुए हृदयकी शिखा देनेवाले
भावोंका रत्नमालाके हृदय पर बहुत ही गहरा असर पड़ा। थोड़ी देर

मणिभद्र

दीक्षा देनेको तैयार होऊँगी—तो निरसन्देह मुझे भी मणिभद्रके ही उत्तर मिलेगा । इस कारण अब पिताजीके जीते जी तक तो व जिस तरह हो इस समयको बिताना ही उचित है ।

वसुभूति अब अपनी पुत्री रत्नमायाके साथ धनदत्तके घर पर रहते हैं । दोनों एक ही स्वभावके बहुत सज्जन पुरुष हैं । आने समय सदा आनन्द और धर्म-ध्यानमें बिताते रहते हैं । कीर-प्रभु भी अब जेठम कहीं अन्यत्र बिहार कर गये हैं । उनका पवित्र चरण-स्पर्शसे आश्वस्तीकी धुँझि भी मिर पर चढ़ाने योग्य हो गई है । समय पास रत्नमाया अपने पिताके पास आती उस समय वसुभूति प्रसंग लाकर मणिभद्रके पवित्र-सरल-मुन्दर स्वभाव, श्रेष्ठ कुल, विद्या-बुद्धि, धन-सम्पत्ति आदिके सम्बन्धमें नाना तरहकी बातें समझाते, और प्रभुकी उसके प्रति जो सद्बलुभूति है, उसका वर्णन करते । इस प्रकार अनेक तरह प्रबोधनोंसे वे रत्नमायाको व्याहृके लिए प्रोत्साहन-प्रवृत्ति प्रेरणा करते; परन्तु रत्नमायाके हृदय पर इन प्रबोधनों और प्रेरणाओंका चिह्न भी असर न पड़ा । वह किसी प्रकार व्याहृ करनेको सममत न हुई जब जब वसुभूति उसके सामने व्याहृकी चर्चा छेड़ने से तब तब वह कह उस बातका ही उदा. देती थी कि पिताजी, अभी तो वह समय है । एक दो वर्ष और बीतने दीजिए, फिर मैं व्याहृका निश्चय कर दूँगी । तब मणिभद्रके साथ पडा ही देर तक बात-चीत करने लगे निश्चय हो गया था कि यदि वह व्याहृ करे और वह खास मणिभद्रके साथ, तो उसके आ-जन्म स्थिति में कुछ पवित्र धर्म-परीक्षा की जरूरत नहीं है । मरने के समय पर ही बाह्य दर्शन-परीक्षा से

करनेका दृढ़ संकल्प किया है उसे सार्वक किस प्रकार का धर्म
मेने सुना है कि जब तक तुम्हें तुम्हारे पिताजी की आज्ञा नहीं
जायगी तब तक तुम दोन्हा मरग नहीं कर सकते । और हम
मेरा विश्वास है कि तुम्हारे पिताजी अब बहुत दूर हो चके हैं
कारण वे कभी आवा न देंगे । और यह भी उचित नहीं है कि

समझोगे !

मणिभद्रने कहा—“ रत्नमाला, तुम जो कुछ कहती हो मैं
है और यह भी संभव नहीं कि पिताजी की बिना आज्ञा बिना वे
छोड़ कर चले हैं । रहूंगा तो मैं समझा होंगे, परन्तु केवल इतनी
लिए ब्याह करके गृही-धर्म स्वीकार करना कभी पसन्द नहीं करूँ
इतना कहते कहते मणिभद्रके आभेयपूर्ण नेत्र रत्नमालाके ओझर
नेत्रोंके साथ मिल गये । मणिभद्रको जान पड़ा कि रत्नमालाके
अव्यक्त आँसू छलक आये हैं । इसके लिए वह थोड़ी देर तक
विचार कर फिर बोला—“ रत्नमाला, मेने सुना है कि तुम्हारे पिता
भी तुम्हारे ब्याहके लिए दृढ़ संकल्प किया है और तुमने ब्याह न
शासन-सेवार्थ आनो-सर्ग करनेकी दृढ़ इच्छा प्रकट की है । तब
तुम्हारे लिए भी मेरे ही मददगार उपयोग उपस्थित है । बतलाओ, कि
तुम किस मार्गका आश्रय लोगी । ”

रत्नमाला बोली—“ मणिभद्र, मच कहती हूँ, ब्याह करनेकी नाम नहीं
लिए भी मेरी इच्छा नहीं है, परन्तु मेरे वशकी कोई बात नहीं ।
का इतना अधिक आग्रह है कि मैं उनकी आज्ञा लाँच नहीं सकती

के हृदयकी जो उच्च भावनाएँ हैं, ये तभी अतृप्ति और निरन्तर बने रह सकती हैं जब कि हम दोनों व्याह कर परस्परमें प्रेमकी पवित्र गोटसे बंध जायें। और ऐसा करके ही हम अपने स्नेही मित्र और बुद्धिमान लोगोंको सुखी-सन्तुष्ट कर सकते हैं। हम उन बातोंको अच्छी तरह समझ चुके हैं कि जिनके कारण हम अब तक व्याह करनेके नैवार न हुए और न अब हैं। इस बातका रचमात्र भी भय नहीं है कि इनसे पवित्र व्याह-सम्बन्धसे हमारी पवित्र और उच्च भावनाओंमें किसी प्रकारका धक्का लगेगा। मोक्ष-मुखकी इच्छा रखनेवाले जिस लोग जिस उद्देश्यसे व्याह नहीं करने हैं उस उद्देश्यको तो हम व्याह हो जानेके बाद भी सुरक्षित रख सकेंगे। और यह तब हो सकता है जब कि तुम्हारा और मेरा परस्पर व्याह हो जाय। ऐसा किये बिना हम अपनी उच्च आकांक्षाओंको कभी सुरक्षित नहीं रख सकते। ऐसे पूर्ण विश्वास है कि प्रभुकी हम पर पूर्ण कृपा है, और यह भी हम निश्चय हैं कि प्रभुकी उस कृपाके बलसे हम इस अग्नि-परीक्षामें बहुत ही सरलताके साथ उत्तीर्ण हो सकेंगे। तुम कुछ अधिक ध्यानसे मेरी इस सलाह पर विचार करोगे तो सब बातें सुलझा समझमें आ जायेंगी।

मणिमद्र अब सनमाळाके भावोंको अच्छी तरह समझ गया। उसने बड़ा देर तक और इस विषय पर ऊहा-पोह कर लपना विचार किया। इसके बाद उनमें आरंभ भी बहुतसी बातें होती रही। अन्तमें ज्ञान समय मणिमद्रने सनमाळामें कहा—“अच्छी बात है सनमाळा! तैसा तुम चाहती हो वही होगा। देखता हूँ कि हम लोगोंके लिए संसार करने और व्याह करके गृहस्थियोंके ऐसा बाधा व्यवहार-सम्बन्ध नके सिवा कोई और प्रकार का मार्ग नहीं है। अस्तु; हम लोग उदा-

मणिमद्र

बर्ष बीत गये । वसुमतिजी ठाकुर इच्छा थी कि सनमाश्रमे बाक-बच्चा हो जाय तो उसका सुन्दर मुख देख कर त्रिपे में साथ मरूँ; परन्तु उनकी इस इच्छाके नाकाब सफ़ल होनेका कोई चिन्ह दिखाई नहीं दिया । उनने तब यह विचार करना शान्त किया कि चाहे सनमाश्रम निम्नस्तान भेजे ही रह जाय इतना तो अच्छा हुआ कि वह संसारमें पड़ गई । जब दूर ऊँ उदय आवेगा तब निश्चय है कि उसके सन्तान होगी । होकर कि मेरे भाग्यमें रोहितेका मुख देखना न छिड़ा हो । इसमें तो कोई दोष नहीं है । इसी प्रकार सन्तानदेक नवने भी कनी । ऐसी सगुणिक इच्छा लठ जाया करती थी । परन्तु दैवी कर्मों वशसे कोई बात न देख कर ये अपने मनको किनी प्रकार से

सुभद्र और मणिपालिनीने पुत्र लभनका सब भार सनमद्र और क गृहिणी छीलाको सोच कर सगे-सम्बन्धियों की आज्ञासे जिनदीक्षा करली और अपने मे वीरप्रभुके शायनकी सेवार्थ उत्सर्ग कर रिपु कुछ समय बाद सनमद्र भी अपना सब कालवार मणिमद्रके सङ्ग श्रीसाहित नरियत्रा तथा सपुत्र-समागमने दिन बिताने लगे । जब सनमद्र और सनमाता यद्यपि सब तरह मन्त्र हो गये थे तथापि उन और भी बिना समय तक मसान न रह कर अपने समयका बड़ी ही साध पाठन किया आ न्यवधान कुशुडन के साथ अपने अन्तर में अच्छे अच्छे कामोंमें उपयोग किया ।

मणिमद अपना अन्तिम वाक्य समाप्त करना है कि इसके पहले ही रत्नमाळा गद् गद् होकर बोली—“प्राणनाथ, आज्ञा ! मैं कितने आज़ा हूँ ! क्या तुम्हें ! जिस पवित्र मूर्तिके दर्शन मात्रसे हृदयमें पूरा करनेसे भावनायें उठने लगती हैं, जिसके कण्ठकी सुमधुर ध्वनि सुन कर प्राण झीतज हो जाते हैं, कानोंमें अमृतकी धारा जैसी बह उठती है, जिसके सङ्घाससे शरीर और मन पवित्र होता है उसे आज्ञा देनेके लिए रहने दो ! अच्छा प्राणनाथ, बतलाओ तो सही जब मैं तुम्हें आज्ञा दे दूँ तो तब मुझे जीनेके लिए किसका आधार रह जायगा ! नाथ, क्षमा करो, मैं नहीं समझ सकती कि आज मेरा मन इतना अशान्त और निर्बल क्यों बना जा रहा है ! इस बातका कुछ निर्णय नहीं कर सकता कि संसार परित्याग करते समय हृदयमें इतनी घबराहट क्यों होती है !”

इतना कह कर रत्नमाळा एक साथ रो पड़ी। हृदयकावेग उससे सँभाळा न गया। वह बड़ी देर तक बैठी बैठी रोती रही। जब बहुत देर गुजरने बाद उसके हृदयका भार कुछ हलका हुआ और वह कुछ सन्न हुई तब उसने कहा—“नाथ, छोड़ो; इस संसारको छोड़ो ! जिस संसार में फैस कर मनुष्य अपना कर्तव्य मूल जाते हैं उस संसारको छोड़ो ! जिस संसारमें मनुष्य अपने आपको भी भुँड जाता है उस संसारको छोड़ो ! अब इस संसारमें मोह करनेकी आवश्यकता नहीं है। जाओ; नाथ जाओ, सदाके लिये जाओ ! जिस बीतराग-धर्म-मार्ग पर एक का भी चटनसे संसारके जन्म-मरण आदि सब भय नष्ट हो जाते हैं उस मार्ग पर जाओ ! जाओ, प्राणेश्वर जाओ; दुखियोंके दुःख करने और दुःख करनेके आमू पीठ कर उन्हें पीरज देनेके लिए जाओ !

प्रातःकाल होते ही मणिभद्रने अपने परिवारके लोगोंसे मित्र का उनकी आज्ञासे ससार-विषय-भोगोंको सदाके लिए परित्याग कर दिया उसके हिस्सेमें जो अपार धन-सम्पदा आई थी उसे उसने जिनमन्दिरों के बनाने, तीर्थोंके उत्थार कराने आदि धार्मिक कार्योंमें दे डाला इसके बाद मणिभद्र और रत्नमाछाने राजगृह जाकर शुभ मुहूर्तमें वीरप्रभुके पा

मुनि-संघके

कराने लगी ।

और तीर्थोंमें जो विशाल भव्य जिनमन्दिर बने थे वे अब तक भी उससे पवित्र कीर्ति और गोवक्ता गान कर रहे हैं । किन्तु इस समय उन पत्थरोंकी आत्म-कथाके सुनने और समझनेवाले नहीं मिलते ।

इस प्रकार धीरे धीरे भारतवर्षके प्रधान प्रधान नगरोंमें पवित्र जैन-शासनका प्रचार बढ़ने लगा । प्रायःस्थानों पर धर्मकी प्रभावशाली होने लगी । ओ निर्दयी काल ! आज यह सब कहाँ चला गया ! मणिभद्र जैसे संघर्षी युवा और रत्नमाछा जैसी साध्वियों क्या अब हमारे समाजमें जन्म न लेने ! जिन युवक-युवतीके अनन्त बल और पवित्र व्रतके प्रभावसे जैनशासनने सारे संसार पर एक ही सार दया-शान्ति-धृमा आदिकी पुण्यभाषनाये फैलाई थी उसी पवित्र शासनके यह वर्तमान शोचनीय दशा न जाने कहाँ तक चटनी रहेगी ! प्रभो एक बार फिर हमारे धर्म और समाज पर कृपा कर रत्नमाछा-सरस्वती पुण्य-चरिता माधवी और मणिभद्र महाराज पवित्र पुरुष-जनोंको उत्पन्न कर 'जिज्ञासा' नाथ, ऐसे विशुद्ध हृदय और धर्म-प्राण महात्माओंके अवतारसे इस बीज-प्रसविनी वसुन्धरा की — भारतमाताको किरसे एक बार गौरव लाओ बनिए ।

